

दुर्गासप्तशती

श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस
प्रकाशन

श्रीः

दुर्गासप्तशती

★

आगरानगरस्थ-गुर्जरविप्रकुलोद्भव पण्डित रामेश्वर भट्ट
विरचिता सरलाभिधानया हिन्दीटीकया
समलंकृता.

★

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई

संस्करण : फरवरी २०२०, संवत् २०७६

मूल्य : १८० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

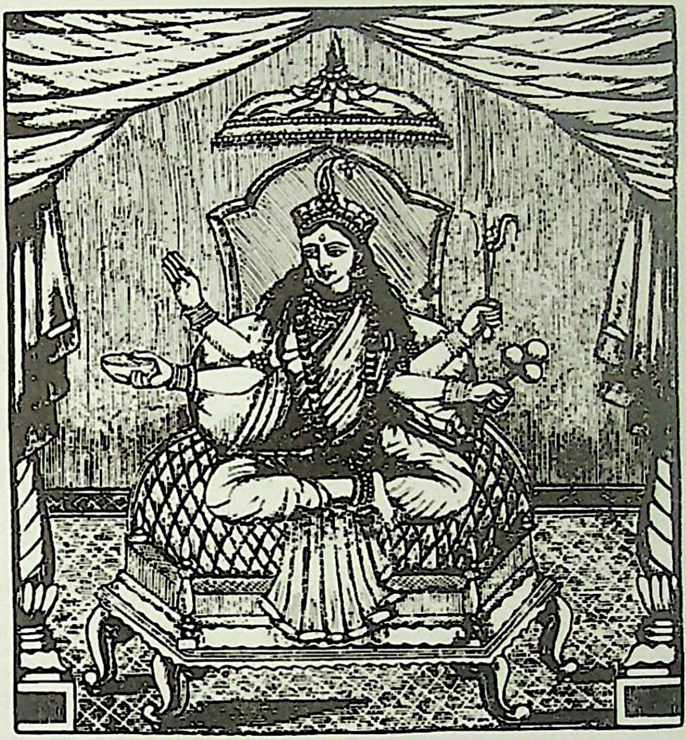
© सर्वाधिकार : प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

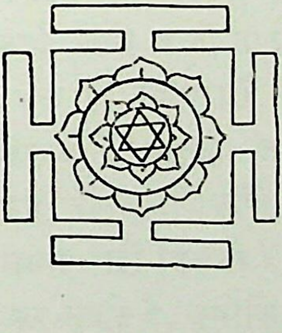
Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshwar Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013

श्रीदुर्गादेव्यै नमः





प्रस्तावना

★

पाठकगण ! लिजिये यह भाषानुवादसे भूषित दुर्गामाहात्म्य आपके समर्पण है, जिस प्रकार महामाया जगज्जननी सिंहवाहिनी आदिशक्तिकी महामान्यता संपूर्ण संसारमंडलमें विख्यात है उसी प्रकार इनके चरित्रके पाठका फल भी अगाध है जिस गृहमें यह चरित्र भक्तिपूर्वक पढ़ा जाता है वहां डाकिनी शाकिनी भूत प्रेत ब्रह्मराक्षसादिकी बाधा नहीं होती है। लक्ष्मी टाली नहीं टलती, शत्रुका नाश और पुत्रपौत्रादिकोंका सुख होता है और इसके अतिरिक्त और भी अनेक सांसारिक अभिमत सिद्ध होते हैं। इस प्रकार इसके केवल पाठका ही अमोघ फल है, फिर जो अब हिन्दी टीकासे अलंकृत हो गया है तो "मधुरं हि पयः स्वभावतो ननु कीदृक् सितशर्करान्वितम्" अर्थात् दुग्ध तो स्वभावहीसे मधुर है फिर जब सितशर्करायुक्त हो गया तब उसके स्वादका क्या कहना है ? विना अर्थ जाने न तो पाठमें ही आनंद आता है और न पाठका पूर्ण फल ही मिलता है। पाठकजनोंसे निवेदन है कि पाठमें जो कठिनत्व है उसको जहांतक हो सका दूर किया है और इसका क्रम अनुक्रमणिकाके देखनेसे ज्ञात होगा। जिन पुरुषोंको अधिक समय नहीं मिलता है वे कवचादिको छोड़कर साधारण पाठ भी कर सकते हैं, क्योंकि ऐसा वचन है कि,

"रात्रिसूक्तं जपेदादौ मध्ये सप्तशतीस्तवम्।
अन्ते तु पठनीयं वै देवीसूक्तमिति क्रमः॥"

अर्थात् आदिमें रात्रिसूक्त मध्यमें सप्तशतीस्तव और अंतमें देवीसूक्त इस प्रकार पाठ करे और जो नवशिक्षितोंको इतना करनेका भी समय न मिले तो वे केवल मध्यमचरित्रका अर्थात् दूसरे अध्यायसे चतुर्थ अध्यायतक ही पाठ कर फल प्राप्त कर सकते हैं क्योंकि यह मूलप्रकृति महालक्ष्मीका चरित्र है।

अन्तमें विद्वज्जनोंसे प्रार्थना है कि, यह भाषानुवाद श्रीयुत वैश्यकुलावतंस धर्मिष्ठ खेमराज श्रीकृष्णदासजीकी अनुमतिसे संस्कृतानभिज्ञों और भाषारसिकजनोंके लिये बनाया गया है। कुछ पंडितोंके लिये नहीं है, इसलिये वे जहां कहीं प्रमादि दोष पावें उसे शुद्ध कर मुझे कृतार्थ करें।

—पंडित रामेश्वरभट्ट,

निवासी गोकुलपुरा—आगरा.

महाकालीध्यानम्

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघान् शूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥१॥

महालक्ष्मीध्यानम्

अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुंडिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥२॥

महासरस्वतीध्यानम्

घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकान्
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ।
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजेच्छुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥३॥

बटुकध्यानम्

करकलितकपालः कुण्डली दण्डपाणि-
स्तरुणतिमिरनीलव्यालयज्ञोपवीती ।
क्रतुसमयसपर्याविघ्नविच्छेदहेतु-
र्जयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥ ४ ॥

दुर्गासप्तशतीकी विषयानुक्रमणिका

इत्यनुक्रमणिका समाप्ता

ॐ नमश्चण्डिकायै

अथ दुर्गासप्तशती

हिन्दीटीकासहिता

★

अथ संकल्पः

अद्येहेत्यादितिथौ मम (यजमानस्य वा) सर्वाभीष्ट-सिद्धयर्थमायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धयर्थं सर्वदा हर्षविजय कामनासिद्धयर्थं श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वती-देवताप्रीत्यर्थं सर्वापन्निवारणार्थं (कवचार्गलकीलकादि सहितम्) मार्कण्डेयपुराणोक्तमार्कण्डेय उवाच इतिपूर्व-कसावर्णिस्सूर्यतनय इत्यारभ्य सावर्णिर्भविता मनुरि-त्यन्तं रात्रिसूक्तादिदेवीसूक्तान्तमादावन्तेऽष्टोत्तरशतन-वार्णमंत्रसम्पुटितम् (अमुकमन्त्रेण सम्पुटितं वा) सप्तशतीस्तवपाठमहं करिष्ये ॥

अथ देवीकवचम्

ॐ नमश्चण्डिकायै । मार्कण्डेय उवाच ।

ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ॥
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥१॥

ॐनमश्चण्डिकायै । मार्कण्डेय ऋषि बोले—कि, हे ब्रह्माजी ! संसारमें जो परम गुप्त, जिससे मनुष्यों की रक्षा हो और जो किसीसे न कहा गया हो वह मुझसे कहिये ॥ १ ॥

ब्रह्मोवाच

अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारकम् ।
देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ २ ॥
प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी ।
तृतीयं चन्द्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥ ३ ॥
पंचमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च ।
सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ॥ ४ ॥
नवमं सिद्धिदात्री च नवदुर्गाः प्रकीर्तिताः ।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥ ५ ॥
अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे ।
विषमे दुर्गमे चैव भयार्ताः शरणं गताः ॥ ६ ॥
न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रणसंकटे ।
नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं न हि ॥ ७ ॥

ब्रह्माजीने कहा कि, हे विप्र ! अतिगुप्त और संपूर्ण प्राणियोंको उपकारक देवीका पवित्र कवच है, उसीको हे महामुनिजी ! तुम सुनो ॥२॥ प्रथम शैलपुत्री, दूसरी ब्रह्मचारिणी, तीसरी चन्द्रघंटा और चौथी कूष्मांडा ॥३॥ पांचवीं स्कन्दमाता और छठी कात्यायनी, सातवीं कालरात्री, आठवीं महागौरी ॥४॥ नववीं सिद्धिदात्री इस प्रकार ये नव दुर्गा नाम ब्रह्मामहात्माने कहे हैं ॥५॥ जो पुरुष इनको अग्निसे जलते हुएमें, शत्रुओंके मध्यमें, रणमें बडे संकटमें, भयपीडामें और शरणमें कहते हैं ॥६॥ उनको संग्रामके संकटमें कुछ अशुभ नहीं होता है और

यस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते ।
ये त्वां स्मरन्ति देवेशि रक्षसे तान्न संशयः ॥ ८ ॥
प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना ।
ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुणासना ॥ ९ ॥
माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना ।
लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया ॥१०॥
श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना ।
ब्राह्मी हंससमारूढा सर्वाभरणभूषिता ॥ ११ ॥
इत्येता मातरः सर्वाः सर्वयोगसमन्विताः ।
नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः ॥१२॥

उसको आपत्ति, शोक, दुःख और भय कुछ नहीं देखता हूं॥७॥ और हे देवेशि! जो नित्य भक्तिपूर्वक तुम्हारा स्मरण करते हैं उनकी वृद्धि होती है और जो तुमको स्मरण करते हैं उनकी निःसंदेह तुम रक्षा करती हो ॥८॥ चामुण्डा प्रेतपर स्थित हैं, वाराही महिषपर सवार हैं, ऐन्द्री गजपर स्थित हैं और वैष्णवी गरुड़पर आसन किये हैं।।९।। माहेश्वरी बैलपर शोभित हैं, कौमारी मयूरपर स्थित हैं, लक्ष्मीजी कमलपर आसन किये हुए हैं और हाथमें कमल धारण करती हैं और विष्णुकी प्रिया देवी हैं ॥१०॥ ईश्वरी देवी श्वेतरूप धारण किये बैल-पर सवार हैं और ब्राह्मी हंसपर स्थित हैं और संपूर्ण आभू-षणोंसे शोभायमान हैं ॥ ११ ॥ इस प्रकार ये संपूर्णदेवियाँ सब योगोंसे युक्त और नाना प्रकारके आभूषणोंकी शोभासे

दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः ।
शंखं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ।
खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च ॥ १३ ॥
कुन्तायुधं त्रिशूलं च शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ।
दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च ॥ १४ ॥
धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ।
नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे ॥ १५ ॥
महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ।
त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये शत्रूणां भयवर्धिनि ॥१६॥
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ।
दक्षिणेऽवतु वाराही नैर्ऋत्यां खड्गधारिणी ॥ १७ ॥

भूषित और अनेक प्रकारके रत्नोंसे शोभायमान हैं ॥१२॥ संपूर्ण देवियां रथमें बैठी हुई क्रोधमें भरी हुई दीखती हैं और शंख, चक्र, गदा, शक्ति, हल, मुसल, आयुध, खेटक, तोमर, परशु और पाश ॥ १३ ॥ कुंतायुध, त्रिशूल, उत्तम आयुध, धनुष इनको दैत्योंके देहनाशके लिये और भक्तोंका भय दूर करनेके लिये ॥१४॥ और देवताओंके हितके लिये इस प्रकार आयुध धारण करती हैं । हे महारौद्रे ! हे महाघोरपराक्रमे ! तुमको नमस्कार है ॥ १५ ॥ हे बड़े बलवाली ! महा उत्साह वाली ! हे महाभयको नाश करनेवाली ! हे दुःखसे दर्शन देनेवाली ! हे शत्रुओंके भयको बढ़ानेवाली ! हे देवि ! मेरी रक्षा करो ॥ १६ ॥ ऐंद्री देवी मेरी पूर्वमें रक्षा करें,

प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद्वायव्यां मृगवाहिनी ।
उदीच्यां पातु कौमारी ईशान्यां शूलधारिणी ॥१८॥
ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा ।
एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना ॥ १९ ॥
जया मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ।
अजिता वामपार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ॥२०॥
शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ।
मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद्यशस्विनी ॥२१॥
त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके ।
शंखिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी ॥२२॥

अग्निदेवता अग्निकोणमें, वाराही दक्षिणमें और नैर्ऋतिमें खड्गधारणी रक्षा करें ॥ १७ ॥ पश्चिममें वारुणी रक्षा करें, वायव्यमें मृगवाहिनी, उत्तरमें कौमारी और ईशानमें शूल-धारणी रक्षा करें ॥ १८ ॥ ऊपरकी ओर ब्रह्माणी रक्षा करें और नीचेकी ओर वैष्णवी रक्षा करें इसी प्रकार प्रेतवाहिनी चामुण्डा दशों दिशाओंमें रक्षा करें ॥ १९ ॥ जयादेवी मेरे आगे रक्षा करें, विजया पीठ पीछे रक्षा करें, अजिता बाईं ओर और अपराजिता दक्षिणकी ओर ॥ २० ॥ उद्योतिनी शिखाकी रक्षा करें और उमा शिरपर स्थित हो और मालाधरी ललाटमें और यशस्विनी भ्रुकुटियोंकी रक्षा करें ॥ २१ ॥ त्रिनेत्रा भ्रुकुटियोंके मध्यमें और यमघंटा नासिकामें रक्षा करें, शंखिनी नेत्रोंके मध्यमें और कानोंमें द्वारवासिनी रक्षा

कपोलौ कालिका रक्षेत्कर्णमूले तु शांकरी ।
नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका ॥२३॥
अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती ।
दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठदेशे तु चण्डिका ॥२४॥
घंटिकां चित्रघण्टां च महामाया च तालुके ।
कामाक्षी चिबुकं रक्षेद्वाचं मे सर्वमंगला ॥२५॥
ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे धनुर्धरी ।
नीलग्रीवा बहिः कंठे नलिकां नलकूबरी ॥ २६ ॥
स्कन्धयोः खड्गिनी रक्षेद्बाहू मे वज्रधारिणी ।
हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चांगुलीषु च ॥२७॥
नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ रक्षेत्कुलेश्वरी ।
स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनःशोकविनाशिनी ॥ २८ ॥

करें ॥२२ कपोलोंमें कालिका और कर्णमूलमें शांकरी रक्षा करें और नासिकामें सुगन्धा और ऊपरके होठमें चर्चिका रक्षा करें ॥२३॥ नीचेके होठमें अमृतकला, जिह्वामें सरस्वती, दन्तोंकी कौमारी और कंठदेशकी चंडिका रक्षा करें॥ २४ ॥ और घंटीकी चित्रघंटा, तालुवेकी महामाया, ठोढीकी कामाक्षी और वाणीकी सर्वमंगला रक्षा करें ॥२५॥ ग्रीवाकी भद्रकाली और पृष्ठवंशकी धनुर्धरी, कंठके बाहरकी नीलग्रीवा और नलिकाकी नलकूबरी रक्षा करें ॥२६॥ दो कन्धोंकी खड्गिनी भुजाओंकी वज्रधारिणी और हाथोंकी दंडिनी और अंगुलियोंकी चण्डिका रक्षा करें, ॥२७॥ नखोंकी शूलेश्वरी रक्षा करें,

हृदयं ललिता देवी उदरं शूलधारिणी ।
नाभौ च कामिनी रक्षेद्गुह्यं गुह्येश्वरी तथा ॥२९॥
पूतना कामिका मेढ्रं गुदं महिषवाहिनी ।
कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी ॥३०॥
जंघे महाबला रक्षेत्सर्वकामप्रदायिनी ।
गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी ॥ ३१ ॥
पादांगुलीः श्रीधरी च पादाधस्थलवासिनी ।
नखान्दंष्ट्राकराली च केशांश्चैवोर्ध्वकेशिनी ॥३२॥
रोमकूपाणि कौमारी त्वचं वागीश्वरी तथा ।
रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती ॥३३॥

कुक्षिकी कुलेश्वरी रक्षा करें, दोनों स्तनोंकी महादेवी रक्षा करें और मनकी शोकविनाशिनी रक्षा करें ॥२८॥ हृदयकी ललिता देवी और उदरमें शूलधारिणी, नाभिमें कामिनी और गुह्य स्थानकी गुह्येश्वरी रक्षा करें ॥२९॥ पूतना कामिका लिंगकी और महिषवाहिनी गुदाकी, भगवती कटिकी और विन्ध्यवासिनी दोनों घोटोंकी रक्षा करें ॥३०॥ जंघाओंकी सर्वकामप्रदायिनी महाबला रक्षा करें, नारसिंही गुल्फोंकी और पैरोंके पीछेके भागकी तैजसी रक्षा करें ॥ ३१ ॥ चरणोंकी अंगुलियोंकी श्रीधरी रक्षा करें और तलुओंकी स्थलवासिनी, नखोंकी दंष्ट्राकराली और केशोंकी ऊर्ध्वकेशिनी रक्षा करें ॥३२॥ रोमोंके छेदोंमें कौमारी, त्वचाकी वागीश्वरी और रक्त, मज्जा, वसा, हड्डी और मेद इनकी पार्वती रक्षा करें ॥३३॥

अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं च मुकुटेश्वरी ।
पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा ॥ ३४ ॥
ज्वालामुखी नसाजालमभेद्या सर्वसन्धिषु ।
शुक्रं ब्रह्माणी मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ॥३५॥
अहङ्कारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी ।
प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम् ॥३६॥
वज्रहस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ॥
रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी ॥३७॥
सत्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ॥
आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी ॥ ३८ ॥
यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ।
गोत्रमिन्द्राणी मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चंडिके ॥ ३९ ॥

कालरात्री आंतोंकी, मुकटेश्वरी पित्तकी, पद्मा पद्मकोशमें और चूडामणि कफमें रक्षा करें ॥ ३४॥ ज्वालामुखी नसोंके जालकी, अभेद्या सर्व संधियोंमें, ब्रह्माणी वीर्यकी और छत्रेश्वरी छायाकी रक्षा करें ॥३५॥ और धर्मधारिणी मेरे अहंकार, मन, बुद्धिकी रक्षा करें और प्राण, अपान, व्यान, उदान, और समान इनकी वज्रहस्ता रक्षा करें और प्राणोंकी कल्याणशोभना रक्षा करें और योगिनी रूप, रस, गंध, शब्द और स्पर्शकी रक्षा करें ॥३६॥३७॥ और सत्त्व, रज, तम इनकी नारायणी सदा रक्षा करें, वाराही आयुकी रक्षा करें और वैष्णवी धर्मकी रक्षा करें ॥३८॥ और चक्रिणी यश, कीर्ति, लक्ष्मी, धन,

पुत्रान्रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ।
पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा ॥ ४० ॥
राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता ।
रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु ॥ ४१ ॥
तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती पापनाशिनी ।
पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ॥ ४२ ॥
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ।
तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः ॥ ४३ ॥
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम ।
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ॥ ४४ ॥

और विद्याकी रक्षा करें और इन्द्राणी शरीरकी रक्षा करें और हे चंडिके ! मेरे पशुओंकी रक्षा करो ॥ ३९ ॥ महालक्ष्मी पुत्रोंकी रक्षा करें और भैरवी स्त्रीकी रक्षा करें और मार्गमें कुशल करनेवाली सुपथानाम देवी मार्गकी रक्षा करें॥४०॥ महालक्ष्मी राजद्वारमें रक्षा करें और चारों ओर स्थित होकर विजया रक्षा करें और जो स्थान रक्षाहीन हैं और कवचसे वर्जित हैं उन सबकी पापनाशिनी जयंती देवी रक्षा करो । यदि अपने कल्याणकी इच्छा करे तो कवचके विना एक पद भी न जाय॥४१॥४२॥ और कवचको लेकर जहां जहां जाता है वहां धनका लाभ, विजय और सब कामनायें सिद्ध होती हैं ॥४३॥ मनुष्य इस पृथ्वीपर जिस जिस कामको विचारता है

निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः ।
त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥४५॥
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् ।
यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः॥४६॥
दैवी कला भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः ॥
जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्युविवर्जितः ॥ ४७ ॥
नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः ।
स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम् ॥४८॥
अभिचाराणि सर्वाणि मंत्रयंत्राणि भूतले ।
भूचराः खेचराश्चैव जलजाश्चोपदेशिकाः ॥ ४९ ॥

उसी उसीको पाता है और बड़े अतुल ऐश्वर्यको पावेगा ॥४४॥ और संग्राममें पराजित न होकर मनुष्य निर्भय हो जाता है और कवच धारण करनेसे मनुष्य त्रिलोकीमें पूज्य हो जाता है ॥४५॥ यह देवीका कवच देवताओंको भी दुर्लभ है, जो इसे श्रद्धापूर्वक और निश्चल होकर तीनों कालमें पढ़ता है ॥ ४६ ॥ उसमें दैवी कला हो जाती है और तीनों लोकमें अपराजित और अपमृत्युसे रहित होकर सौ वर्ष जीवित रहता है ॥ ४७ ॥ लूता विस्फोटकादि सब व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं और स्थावर-जंगम और कृत्रिम विषादि ॥ ४८ ॥ तथा सब अभिचार और मंत्र यंत्र जो पृथ्वीपर हैं, भूचर, खेचर और जलचर तथा उपदेशिक जलचर ॥ ४९ ॥

सहजा कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा ।
अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः ॥५०॥
ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः ।
ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ॥५१॥
नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते ।
मानोन्नतिर्भवेद्राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम् ॥ ५२ ॥
यशसा वर्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले ।
जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥५३॥
यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम् ।
तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रिकी ॥५४॥
देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् ।
प्राप्नोति पुरुषो नित्यं महामायाप्रसादतः ॥५५॥

और साथ ही उत्पन्न हुए और कुलमें उत्पन्न हुए गंडमाला डाकिनी, शाकिनी, अंतरिक्षचर, तथा महाबलवाली घोर डाकिनियां ॥ ५० ॥ ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्मराक्षस, वेताल, कूष्मांड और भैरव आदि ॥ ५१ ॥ दर्शनसे चले जाते हैं। जिसके हृदयमें कवच हो राजाद्वारा उसके मानकी उन्नति होती है और तेजको अधिक बढ़ानेवाला है ५२॥ जो मनुष्य प्रथम कवचका पाठ करके फिर सप्तशती पाठ करता है उसकी पृथ्वीभरमें यश और कीर्ति बढ़ती है ॥५३॥ और जबतक पृथ्वीपर शैल वन वृक्षादि हैं तबतक उसकी पुत्रपौत्रादिकी सन्तति स्थित रहेगी ॥ ५४ ॥ और वह पुरुष

लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ॥ ५६ ॥

इति वाराहपुराणे हरिहरब्रह्मविरचितं देव्याः कवचं समाप्तम् ।

अथ अर्गलास्तोत्रम्

ॐ नमश्चण्डिकायै

जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते ॥१॥
जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणी ।
जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥
मधुकैटभविद्रावि विधातृ वरदे नमः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ३ ॥

महामायाके प्रसादसे मरनेके उपरान्त उस सुन्दर स्थानको जाता है कि, जो देताओंको भी दुर्लभ है ॥ ५५ ॥ और परमरूप होकर शिवके संग आनन्द करता है ॥ ५६ ॥

पं० रामेश्वरभट्टकृत देवी कवचका हिन्दी-अनुवाद समाप्त

ॐ नमश्चण्डिकायै । जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा आदि रूपिणिको नमस्कार है ॥१॥ हे चामुंडे देवि! हे प्राणियोंके कष्टको नाश करनेवाली ! तुम जय करो और हे सर्वगते ! हे देवि ! हे कालरात्रि ! तुम जय करो आपको नमस्कार है॥२॥हे मधुकैटभनाशिनि! हे ब्रह्माको वर देनेवाली ! तुमको नमस्कार है।

महिषासुरनिर्णाशि भक्तानां सुखदे नमः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ४ ॥
रक्तबीजवधे देवि चण्डमुण्डविनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ५ ॥
शुम्भस्यैव निशुंभस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ६ ॥
वन्दितांघ्रियुगे देवि सर्व सौभाग्यदायिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ७ ॥
अचिन्त्यरूपचरिते सर्वशत्रुविनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ८ ॥

रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओंको मारो॥ ३॥ हे महिषासुरनाशिनि! हे भक्तोंके सुख देनेवाली ! तुमको नमस्कार है रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओंका नाश करो॥ ४॥ हे रक्तबीजविनाशिनि ! हे चण्डमुण्डविनाशिनि ! हे देवि ! रूप दो, जय दो, यश दो, और शत्रुओंका नाश करो॥ ५॥ हे शुंभ निशुंभ और धूम्राक्षके मर्दन करने वाली ! रूप दो जय दो, यश दो और शत्रुका नाश करो ॥ ६ ॥ हे वन्दितचरणकमलवाली ! हे सम्पूर्ण सौभाग्यको देनेवाली ! रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुका नाश करो ॥७॥ हे अचिन्त्य रूप और चरित्रोंवाली ! हे सम्पूर्ण शत्रुविनाशिनि ! रूप दो जय दो यश दो और शत्रुका नाश करो ॥ ८ ॥

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ९ ॥
स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनि।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१०॥
चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥११॥
देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १२ ॥
विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१३॥
विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१४॥

हे चण्डिके! दुःखनाशिनि! सर्वदा भक्तिपूर्वक नम्रहुए मनुष्योंको रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओंका नाश करो ॥९॥ हे चंडिके! हे व्याधिनाशिनि! भक्तिपूर्वक (तुम्हारी) स्तुति करनेवालोंको रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो ॥१०॥ हे चंडिके! जो पुरुष निरन्तर तुमको भक्तिसे पूजते हैं उनको रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओंका नाश करो ॥११॥ हे देवि! मुझे सौभाग्य आरोग्यता और परम सुख दो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुका नाश करो ॥१२॥ हे देवि ! शत्रुओंका नाश करो और अधिक बल करो रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रु नाश करो॥१३॥ हे देवि!

सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्ट चरणेऽम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १५ ॥
विद्यावंतं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहिद्विषो जहि ॥१६॥
प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चंडिके प्रणताय मे ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१७॥
चतुर्भुजे चतुर्वक्त्र संस्तुते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१८॥
कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या सदांबिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१९॥

कल्याण करो और उत्तम संपत्ति दो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुशनाश करो ॥१४॥ हे सुर और असुरोंके शिररत्नोंसे स्पर्शित चरणोंवाली, हे अंबिके ! रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुनाश करो॥१५॥ और पुरुषोंको विद्या-वान, यशस्वी और लक्ष्मीवान करो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुनाश करो ॥१६॥ हे उग्र दैत्योंके घंमडको नाश करनेवाली ! हे चंडिके ! मुझ नत हुएको रूप दो, जय दो यश दो और शत्रुका नाश करो॥१७॥ हे चार भुजावाली ! हे ब्रह्माजीसे स्तुति की गई ! हे परमेश्वरि ! रूप दो जय दो, यश दो और शत्रुओंका नाश करो ॥ १८ ॥ हे निरन्तर कृष्णजीसे भक्तिपूर्वक स्तुति की गई ! हे अंबिके ! हे देवि ! रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुनाश करो ॥ १९ ॥

हिमाचलसुतानाथ संस्तुते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२०॥
इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२१॥
देवि प्रचण्डदोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२२॥
देवि भक्तजनोद्दामदत्तानन्दोदयेऽम्बिके ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥२३॥
पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् ।
तारणीं दुर्गसंसारसागरस्य कुलोद्भवाम् ॥२४॥

हे हिमाचलकी पुत्रीके नाथसे अर्थात् शिवजीसे स्तुति की हुई परमेश्वरी ! रूप दो, जय दो, यश दो शत्रुओंको मारो॥२०॥ इन्द्रने आपका उत्तम भावसे पूजन किया है हे परमेश्वरि ! रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुनाश करो ॥ २१ ॥ हे देवि ! आपने अपने उग्र भुजारूपी दंडोंसे दैत्योंके अभिमानका नाश किया है, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुनाश करो ॥२२॥ हे भक्तजनोंके अत्यन्त आनन्द देनेवाली अम्बिके ! रूप दो जय दो यश दो और शत्रुओंका नाश करो ॥ २३ ॥ मनके वृत्तके अनुसार चलानेवाली, कठिन संसारसागरसे पार करनेवाली और सत्कुलमें उत्पन्न हुई ऐसी सुन्दर

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः ।
स तु सप्तशतीसंख्यावरमाप्नोति संपदाम् ॥२५॥

इति मार्कण्डेयपुराणे अर्गलास्तोत्रं समाप्तम् ।

अथ कीलकस्तोत्रम्

★

मार्कण्डेय उवाच

विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे ।
श्रेयःप्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे ॥ १ ॥
सर्वमेतद्विजानीयान्मंत्राणामपि कीलकम् ।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ॥ २ ॥
सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि ।
एतेन स्तुवतां देवीं स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति ॥ ३ ॥

स्त्री दो ॥२४॥ इस स्तोत्रको पढ़कर जो कोई नर महा-स्तोत्र अर्थात् कीलकको पढ़ता है वह सप्तशतीसंख्याके वरके समान सम्पत्तिको पाता है ॥ २५ ॥

पं० रामेश्वरभट्टकृत अर्गलाका हिन्दी-अनुवाद समाप्त ।

मार्कंडेयजी बोले-कि, निर्मल-ज्ञानस्वरूप, वेदत्रयी रूप, तीन नेत्रवाले, कल्याणकी प्राप्तिके कारणरूप, ऐसे अर्धचन्द्र धारण करनेवाले महादेवजीको नमस्कार है ॥१॥ जो पुरुष जपमें तत्पर होकर मंत्रोंके इस संपूर्ण कीलकको जाने वही कल्याण प्राप्त करता है ॥२॥ जो पुरुष इससे देवीकी स्तुति

न मन्त्र नौषधं तन्त्रं न किञ्चिदपि विद्यते ।
विना जाप्येन सिद्धेचयत सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥४॥
समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः ।
कृत्वा निमंत्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥ ५ ॥
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः ।
समाप्नोति सुपुण्येन तां यथावन्नियंत्रणाम् ॥६॥
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न संशयः ।
कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥७॥
ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसिद्ध्यति ।
इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम् ॥ ८ ॥

करते हैं उनकी उच्चाटन आदि सम्पूर्ण वस्तु स्तोत्रमात्रसे ही सिद्ध हो जाती हैं ॥३॥ ऐसा न तो कोई मंत्र है और न कोई औषध और तंत्र है कि जिसके विना जप किये सम्पूर्ण उच्चाटनादिक सिद्ध हो जांय ॥४॥ महादेवजी लोककी इस शंकासे कि सम्पूर्ण वस्तुही सिद्ध हो जायंगी इसलिये इस सम्पूर्ण शुभको कील दिया है ॥५॥ और उन शंकरने इस चण्डिकाके स्तोत्रको गुप्त कर दिया, इसलिये नर इस कीलित पदार्थ को जो बड़े पुण्यसे प्राप्त करता है ॥६॥ उसको कल्याण मिलता है इसमें कुछ संशय नहीं है और जो कृष्णपक्षकी चतुर्दशी तथा अष्टमीको सावधान होकर ॥७॥ जो औरोंको देता है और फिर आप लेता है उसको सिद्धि होती है अन्यथा नहीं होती है ऐसे कीलकसे महादेवने कील दिया है,

यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम् ।
ससिद्धः सगणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥९॥
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापि हि जायते ।
नापमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥१०॥
ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति ।
ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥ ११॥
सौभाग्यादि च यत्किंचिद्दृश्यते ललनाजने ।
तत्सर्वं त्वत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥ १२ ॥

इसका सारांश यह है कि या तो दुर्गापाठ अष्टमी और चतुर्दशीको औरोंको सिखावे या आप सीखे और यह अर्थ भी निकलता है कि अपना संचित धन अष्टमी और चतुर्दशीके दिन भगवतीको अर्पण करे और फिर अपने निर्वाहके लिये उनकी आज्ञासे ग्रहण करे ॥ ८ ॥ जो पुरुष उत्कीलन करके इस पाठको करता है वह सिद्ध और गणोंसहित गन्धर्वरूप हो जाता है ॥ ९ ॥ और विचरते हुए पुरुषको कहीं भय नहीं होता है उसकी अपमृत्यु नहीं होती है और मरकर मोक्ष पाता है ॥१०॥ उसको जानकर आरम्भ करे क्योंकि जो नहीं करता है वह नष्ट हो जाता है इसलिये पण्डितोंको चाहिये कि उसको सम्यक् जानकर आरम्भ करें ॥११॥ और जो कुछ स्त्रीजनोंमें सौभाग्यादि दीखता है सो सब तुम्हारे प्रसादसे है इसलिये यह मंत्र जपना चाहिये ॥ १२ ॥ और

शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन्स्तोत्रे संपत्तिरुच्चकैः ।
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥ १३ ॥
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः ।
शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥१४॥

इति भगवत्याः कीलकस्तोत्रं समाप्तम् ।

अथ नवार्णमन्त्रजपविधिः

★

ॐअस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि । श्रीमहाकालीमहालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः । नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः । रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि । अग्निर्वायुः सूर्यस्तत्त्वानि। ममाभीष्टसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः॥ अथ ऋष्यादिन्यासः । ॐब्रह्माविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः शिरसि । ॐगायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे।

जो तुम्हारे पाठको धीरे धीरे पढ़ता है उसको बड़ी सम्पत्ति मिलती है अतएव उसका आरम्भ करना चाहिये ॥१३॥ और जिस भगवतीके प्रसादसे ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्य, संपत्ति, शत्रुहानि और मोक्ष मिलता है वह मनुष्योंसे क्यों न स्तुति की जाय अर्थात् मनुष्योंको उसकी अवश्य स्तुति करनी चाहिये ॥ १४ ॥

पं० रामेश्वरभट्टकृत कीलकका हिन्दी-अनुवाद समाप्त ।

श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवताभ्यो नमः हृदि । नन्दाशाकम्भरीभीमाशक्तिभ्यो नमः दक्षिणस्तने । रक्तदंतिकाभीमाभ्रामरीबीजेभ्यो नमः वामस्तने। अग्निर्वायुस्तत्त्वेभ्यो नमः हृदये । ततः ऐं ह्रीं क्लीं चामुंडायै विच्चे इति मूलेन संशोध्य ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः।ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः । ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः ॥ ॐ ऐं हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ क्लीं शिखायै वषट् । ॐ चामुडायै कवचाय हुं । ॐ विच्चै नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट् ॥ अथ बीजन्यासः ॥ ॐ ऐं नमः शिखायाम् ।ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे। ॐ क्ली नमः वामनेत्रे । ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः दक्षिणनासारंध्रे । ॐ यैं नमः वामनासारंध्रे । ॐ विं नमः मुखे। ॐ च्चें नमः गुह्ये ॥ अथ व्यापकन्यासः॥ ॐ ऐं प्राच्यै नमः । ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः । ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः । ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः । ॐ विच्चे वायव्यै नमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः । ॐ विच्चेईशान्यै नमः।ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुंडायै विच्चेऊर्ध्वायै

नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुंडायै विच्चे भूम्यैः नमः ॥ अथ ध्यानम् ॥ ॐ शंखं चक्रं गदां बाणान् चापं परिघशूलके ॥ भुशुण्डीं च शिरः खड्गं दधतीं दशवक्त्रकाम् ॥१॥ तामसीं श्यामलां नौमि महाकालीं दशांघ्रिकाम् ॥ मालां च परशुं बाणान् गदां कुलिशमेव च ॥ २ ॥ पद्मं धनुः कुण्डिकां च दण्डं शक्तिमसिं तथा ॥ खेटकं जलजं घंटां सुरापात्रं च शूलकम् ॥३॥ पाशं सुदर्शनं चैव दधतीं लोहितप्रभाम् ॥ पद्मे स्थितां महालक्ष्मीं भजे महिषमर्दिनीम् ॥ ४ ॥ घण्टां शूलं हलं शंखं मुसलारिधनुःशरान् ॥ दधतीमुज्ज्वलां नौमि देवीं गौरीसमुद्भवाम् ॥ ५ ॥

अथ रात्रिसूक्तम्

तत्रादौ ऋग्वेदोक्तं रात्रिसूक्तम् ॥ ॐ रात्रीव्यख्ये-दायती पुरुत्रादेव्यं १ क्षभिः ॥ विश्वाअधिश्रियोधित ॥१॥ ओर्वप्रा अमर्त्यां निवतो देव्यु १ द्वतः ॥ ज्योतिषाबाधते तमः ॥ २ ॥ निरुस्वसारमस्कृतोपसदेव्यायती ॥ अपेदुहासते तमः ॥ ३ ॥ सानोअद्ययस्यावयंनितेयामन्नविक्ष्महि ॥ वृक्षे नवसतिंवयः ॥ ४ ॥ निग्रामासोअविक्षत-निपद्वंतोनि पक्षिणः ॥ निश्येनासश्चिदर्थिनः ॥५॥ यावया वृक्यं १ वृकयवयंस्तेतमूर्म्ये ॥ अथानः सुतराभव ॥६॥

उपमापेपिंशत्तमः कृष्णंव्यक्तमस्थित ॥ उंषऋणेव यातय ॥ उपंतेगाइवाकरंवृणीष्वदुहितर्दिवः ॥ रात्रीस्तोमंनजिग्युषे ॥८॥ इति ऋग्वेदोक्तं रात्रिसूक्तं समाप्तम् ॥

तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम्

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ॥ निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका । सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥२॥ अर्धमात्रा स्थिता नित्या याऽनुच्चार्या विशेषतः । त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥ ३ ॥ त्वयैतत् धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥ त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥४॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ॥ तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥५॥ महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥ महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ॥६॥ प्रकृतीस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ॥ कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥७॥ त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥ लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शांतिः क्षांति रेव च ॥ ८ ॥ खड्गिनीशूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥ शंखिनी चापिनी बाणा भुशुंडी परिघायुधा ॥९॥ सौम्या सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्व-

तिसुंदरी ॥ परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥१०॥ यच्च किंचित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥ तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥ ११ ॥ यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ॥ सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ १२ ॥ विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च॥कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ॥ १३ ॥ सा त्वमित्थंप्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता॥मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ॥ १४ ॥ प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥ बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ १५ ॥

इति तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम्

अथ सप्तशतीन्यासः

ॐअस्य श्रीसप्तशतिकास्तवनमालामंत्रस्य मेधामार्कण्डेय ऋषिः।गायत्र्यादिनानाविधानि छन्दांसि। महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः।ऐंह्रींक्लीं बीजानि। क्षमलवर्य्यूं चामुंडाशक्तिः । परमशैवलिंगम्।अग्निर्वायुः। सूर्यस्तत्त्वम् । ममाभीष्टसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः॥अथ ऋष्यादिन्यासः॥ मेधामार्कण्डेय ऋषये नमः शिरसि। गायत्र्यादिनानाछन्दोभ्यो नमः मुखे।श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीभ्यो नमः हृदि। ऐं ह्रीं क्लीं बीजेभ्यो नमः नाभौ। क्षमलवरयूं चामुण्डाशक्त्यै नमः गुह्ये। अग्निर्वायुः सूर्यस्तत्त्वेभ्यो नमः सर्वांगे। अथ करन्यासः।

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा। शंखिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके। घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिस्वनेन चेति तर्जनीभ्यां नमः। ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरीति मध्यमाभ्यां नमः। सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरंति ते। यानिचात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवमित्यनामिकाभ्यां नमः। खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके। करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते। भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ अथाङ्गन्यासः॥ ॐखड्गिनीशूलिनीत्यादिहृदयायनमः। ॐशूलेन पाहीति शिरसे स्वाहा। ॐ प्राच्यां रक्षेति शिखायै वषट्। ॐ सौम्यानि यानीति कवचाय हुम्। ॐ खड्गशूलगदादीनीति नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ सर्वस्वरूपे इत्यस्त्राय फट्॥ अथ ध्यानम्॥ खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघान् शूलं भुशुण्डीं शिरः शंखं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्। नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्॥ १॥ अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं

धनुः कुण्डिकां दंडं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् । शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ २ ॥ घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकं हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् । गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजेच्छुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥३॥

इति ध्यानम्

अथ प्रथमोऽध्यायः

अस्य श्रीप्रथमचरित्रस्य ॥ ब्रह्मा ऋषिः ॥ महाकाली देवता ॥ गायत्री छन्दः ॥ नन्दा शक्तिः ॥ रक्तदंतिका बीजम् ॥ अग्निस्तत्त्वम् ॥ ऋग्वेदः मूर्तिः ॥ श्रीमहाकाली प्रीत्यर्थं प्रथमचरित्रपाठे विनियोगः ॥ खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघान् शूलं भुशुण्डीं शिरः शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ॥ नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥ १ ॥

प्रमथ चरित्रके ब्रह्मा ऋषि हैं, इसमें महाकाली देवता है, गायत्री छन्द है, नंदा शक्ति है, रक्तदन्तिका बीज है, अग्नितत्त्व है, ऋग्वेदकी मूर्ति है और महाकालीके प्रीत्यर्थ इसका विनियोग

मार्कण्डेय उवाच ॥ १ ॥
सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद्गदतो मम ॥ २ ॥
महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः ।
स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥ ३ ॥
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः ।
सुरथो नाम राजाऽभूत्समस्ते क्षितिमण्डले ॥ ४ ॥

है (इस भाषाके पढ़नेकी तो आवश्यकता नहीं है) केवल 'अस्य श्री' से 'विनियोगः' यहांतक पढ़कर जल छोड़ना फिर ध्यान पढ़ना और हृदयमें ऐसा ध्यान करना कि; खड्ग, चक्र, गदा, बाण, चाप, परिघ, शूल, भुशुंडी, शिर, शंख इनको धारण किये, तीन नेत्रोंसे तथा संपूर्ण अंगोंके आभूषणोंसे शोभायमान, नीलमणिके समान कांतिवाली और दशमुख और दश चरणोंसे शोभित और जब विष्णु भगवान् योगनिद्रामें सो रहे थे तब ब्रह्माजीने मधुकैटभके मारनेके लिये जिनकी स्तुति की थी ऐसी महाकालीका भजन करता हूं ॥ १ ॥

श्रीमार्कण्डेय ऋषि बोले॥१॥सूर्यका पुत्र सावर्णि (अर्थात् सूर्यकी छायासे उत्पन्न) कि जिसको आठवां मनु कहते हैं उसकी उत्पत्ति मुझसे सुनो मैं विस्तारपूर्वक कहता हूं ॥२॥ महामाया भगवतीकी कृपासे वह सूर्यका पुत्र संपूर्ण ऐश्वर्यसे सम्पन्न सावर्णि, जिस प्रकार मन्वन्तरका स्वामी हो गया सो श्रवण करो ॥३॥ स्वारोचिष नाम दूसरे मनुके राज्याधिका-

तस्य पालयतः सम्यक्प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ।
बभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ॥ ५ ॥
तस्य तैरभवद्युद्धमतिप्रबलदण्डिनः ।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ॥ ६ ॥
ततः स्वपुरमायातो निजदेशाधिपोऽभवत् ।
आक्रांतः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥७॥
अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः ।
कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः ॥ ८ ॥
ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः ॥
एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥ ९ ॥

रके समय कथासे पूर्व चैत्रके वंशमें उत्पन्न सुरथ नाम सम्पूर्ण पृथ्वीमंडलका राजा हुआ ॥४॥ जब सुरथ नाम राजा अपनी प्रजाका नीतिपूर्वक और निज पुत्रोंके समान पालन करने लगा उस समय उसके कोलाविध्वंसी नामक राजा शत्रु हो गये ॥ ५ ॥ और अधिक प्रबल दंड देनेवाले सुरथके साथ उनका युद्ध हुआ यद्यपि कोलाविध्वंसी राजा थोड़े थे तथापि उन्होंने उसे युद्धमें जीत लिया ॥ ६ ॥ फिर प्रबल शत्रुओंसे दबकर वह महाभाग सुरथ राजा अपने पुरमें आकर अपने देशका राज्य करने लगा ॥७॥ फिर उस पुरमें भी उसके बलवान् दुष्ट मंत्रियोंने उस दुर्बल राजाका खजाना और सेना सब हर लिया ॥ ८ ॥ इसके अनन्तर वह राजा अपना सब राज्य हारकर मृगयाके बहाने अकेला घोड़ेपर

स तत्राश्रममद्राक्षीद्द्विजवर्यस्य मेधसः ।
प्रशान्तश्वापदाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम् ॥१०॥
तस्थौ कंचित्स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः ।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन्मुनिवराश्रमे ॥ ११ ॥
सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः ।
मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ॥१२॥
मद्भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा ॥
न जाने सप्रधानो मे शूरहस्ती सदामदः ॥ १३ ॥
मम वैरिवशं यातः कान्भोगानुपलप्स्यते ।
ये ममानुगता नित्यं प्रसादधनभोजनैः ॥ १४ ॥

चढ़कर गहरे वनको चला गया ॥९॥ वहां उसने परहिंसा न करनेवाले पशुओंसे भरा हुआ और मुनि तथा उसके शिष्योंसे शोभायमान ऐसा मेधानाम महर्षिका आश्रम देखा ॥१०॥ वहां उस मुनिने इनका बड़ा सत्कार किया और वह राजा इधर-उधर विचरता हुआ उस मुनिवरके आश्रममें थोड़े काल तक रहा ॥११॥ फिर वहां भी जब ममताने उसके चित्तको घुमाया तब वह सोचने लगा कि, जिस पुरका मेरे पुरखोंने पालन किया था वह अब मुझसे रहित हो रहा है ॥१२॥ वे मेरे दुराचारी सेवक उसकी धर्मसे रक्षा करते होंगे कि नहीं यह नहीं जानता हूं और मंत्रियुक्त मेरा सदा मदवाला शूरहाथी ॥ १३ ॥ मेरे वैरीके वशमें पड़कर किन किन भोगोंको भोगता होगा और जो नित्य प्रसाद धन और भोजनों से

अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम् ।
असम्यग्व्ययशीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ॥१५॥
संचितः सोऽतिदुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति ।
एतच्चान्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः ॥ १६ ॥
तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं ददर्श सः ।
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ॥१७॥
सशोक इव कस्मात्त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे ।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् ॥१८॥
प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् ॥१९॥
वैश्य उवाच ॥ २० ॥
समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ॥२१॥

मेरे आज्ञाकारी थे ॥१४॥ वे अब दूसरे राजाओंकी निश्चय सेवा करते होंगे और आरोग्य रीतिपर व्यय करनेवाले निरंतर व्यय करते हुए उन सेवकों द्वारा ॥१५॥ अत्यन्त दुःखसे जोडा हुआ खजाना खर्च हो जायगा इस प्रकार वह निरंतर चिंता करने लगा॥१६॥फिर उस राजाने उस मुनिके आश्रमके पास एक वैश्यको देखा और उससे पूछा कि तुम कौन हो और यहां किस कारणसे आये हो॥१७॥और तुम शोकयुक्तके समान उदास दीखते हो इसका क्या हेतु है? तब विनयपूर्वक कही हुई उस राजाकी बात सुनकर ॥१८॥ उस वैश्यने नम्रतासे उस राजाको यह उत्तर दिया ॥१९॥ वैश्य बोला॥२०॥ धनिकोंके कुलमें उत्पन्न हुआ हूं जातिका वैश्य हूं और मेरा

पुत्रदारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः ।
विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ॥ २२ ॥
वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्तबन्धुभिः ।
सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलाकुशलात्मिकाम्॥२३॥
प्रवृत्तिं स्वजनानां च दाराणां चात्र संस्थितः ॥
किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम् ॥२४॥
कथं ते किं नु सद्वृत्ता दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः॥२५॥

राजोवाच ॥ २६ ॥

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्रदारादिभिर्धनैः ॥ २७ ॥
तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम् ॥ २८ ॥

नाम ''समाधि'' है॥२१॥ मेरे असज्जन स्त्रीपुत्रोंने धनके लोभसे मेरा सब धन छिनाकर मुझे घरसे निकाल दिया है और पुत्र तथा धनसे रहित॥२२॥ मुझको मेरे मित्र और भाई बंधुओंने भी त्याग दिया इसलिये मैं इस वनमें आया हूं और यहां वनमें बैठा हुआ अपने पुत्रों बन्धुओं तथा स्त्रियोंका कुशलाकुशलको वार्ता नहीं जानता हूं कि उनके घरोंमें कुशल है अथवा कोई पीडा है ॥ २३ ॥ २४ ॥ और मेरे पुत्रोंका आचरण अब अच्छा है कि बुरा है ? ॥२५॥ राजा बोला ॥२६॥ जिन लोभी पुत्र स्त्री आदिकोंने तुमको धनके लोभसे निकाल दिया॥ ॥२७॥ उनमें अब तुम्हारा चित्त क्यों स्नेह करता है ? ॥२८॥

वैश्य उवाच ॥ २९ ॥

एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं वचः ॥ ३० ॥
किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः ।
यैः सन्त्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः ॥३१॥
पतिस्वजनहार्दं च हार्दितेष्वेव मे मनः ।
किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते ॥ ३२ ॥
यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु ।
तेषां कृते मे निःश्वासो दौर्मनस्यं च जायते ॥३३॥
करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ॥३४॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ ३५ ॥

ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ ॥३६॥

वैश्य बोला ॥२९॥ जो तुम कहते हो यही बात मेरे भी मनमें है ॥३०॥ परन्तु मैं क्या करूं मेरे चित्तमें ऐसी कठोरता नहीं उत्पन्न होती है और जिन धनके लोभियोंने पिता, पति और मित्रके स्नेहको त्यागकर मुझे निकाल दिया है उनमें ही मेरा मन फँस रहा है और हे श्रेष्ठबुद्धिवाले ! यह जानकर भी मेरा चित्त उनही अवगुणी बन्धुओंमें प्रेम करता है सो यह नहीं जानता हूं कि क्या बात है ? ॥३१-३३॥ उन्हींके लिए मेरा-विश्वास और खिन्न चित्त होता है परन्तु क्या करूं, उन निर्मो-हियोंमें मेरा मन कठोर नहीं होता ॥३४॥ मार्कंडेयजी बोले ॥३५॥ फिर दोनों मिलकर उन मुनिके पास गये ॥३६॥

समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः ।
कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ॥३७॥
उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्यपार्थिवौ ॥३८॥

राजोवाच ॥ ३९ ॥

भगवँस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ॥४०॥
दुःखाय यन्मे मनसः स्वचित्तायत्ततां विना ।
ममत्वं गतराज्यस्य राज्यांगेष्वखिलेष्वपि ॥४१॥
जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम ।
अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ॥४२॥
स्वजनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति ।
एवमेष तथाहं च द्वावप्यत्यन्तदुःखितौ ॥४३॥

और वही समाधि नाम वैश्य और वह श्रेष्ठ राजा शास्त्रके अनुसार संभाषण करके ॥३७॥ बैठ गये और वह राजा और वैश्य कुछ बात करने लगे ॥३८॥ राजा बोला ॥३९॥ हे भगवन् ! मुझे आपसे कुछ बात पूछनी है, उसको आप कहिये ॥४०॥ कि चित्तकी अधीनताके बिना जो मेरे मनको दुःख है सो यह है कि, गये हुए राज्यमें और सब राज्यके अंगोंमें ॥४१॥ जान बूझकर भी अज्ञके समान मेरी ममता है और हे मुनिश्रेठ ! यह वैश्य भी अपने पुत्र स्त्री और सेवकोंसे निरादर करके निकाल दिया गया है॥४२॥और बांधवोंने भी इसको त्याग दिया है तो भी इसका चित्त उन्हींमें लग

दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ ।
तत्किमेतन्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥ ४४ ॥
ममास्य च भवत्येषा विवेकांधस्य मूढता ॥४५॥

ऋषिरुवाच ॥ ४६ ॥

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे ॥ ४७ ॥
विषयश्च महाभाग याति चैवं पृथक् पृथक् ।
दिवान्धाः प्राणिनः केचिद्रात्रावन्धास्तथापरे ॥४८॥
केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः ।
ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किंनु ते न हि केवलम् ॥४९॥

रहा है इस प्रकार यह और मैं दोनों अत्यन्त दुःखी हैं ॥ ४३ ॥ जिसमें दोष दीखता है उस विषयमें भी ममताने हमारे दोनोंके मनको डामाडोल कर रखा है सो हे मुनि श्रेष्ठ ! यह क्या बात है कि, ज्ञानियोंको भी मोह सताता है ॥ ४४ ॥ मेरी और इसकी यह मूढता, विवेक ज्ञान न होनेसे अन्धे पुरुषके समान हो रही है ॥४५॥ ऋषि बोले ॥४६॥ समस्त जन्तुओंके विषयके दृष्टिगोचर होनेपर ज्ञान है ॥४७॥ परन्तु हे राजन् ! विषय इस भिन्न भिन्न प्रकारसे ज्ञानको प्राप्त होता है कितनेही प्राणी तो दिनमें अंधे हैं और कितने ही रात्रिको अंधे हैं ॥ ४८ ॥ कितनेही दिन तथा रात्रिमें समान दृष्टिवाले हैं अर्थात् उन्हें दिन और रात्रिमें एकसा दीखता है और मनुष्य ज्ञानी हैं यह सत्य है, परन्तु उनको केवल ज्ञान नहीं है ॥

यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः ।
ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम्॥५०॥
मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः ।
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान्पतङ्गाञ्छावचञ्चुषु॥५१॥
कणमोक्षादृतान्मोहात्पीड्यमानानपि क्षुधा ।
मानुषा मनुजव्याघ्र साभिलाषाः सुतान्प्रति॥५२॥
लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेताकिं न पश्यसि ।
तथापि ममतावर्ते मोहगर्ते निपातिताः ॥ ५३ ॥
महामायाप्रभावेण संसारस्थितिकारिणा ।
तन्नात्र विस्मयः कार्यो योगनिद्रा जगत्पतेः॥५४॥

॥४९॥ क्योंकि वैसे तो पशु पक्षी मृगादि संपूर्ण ही ज्ञानी हैं जो ज्ञान मृगपक्षियोंको है वही ज्ञान मनुष्योंको है ॥५०॥ और इसके अतिरिक्त जो आहार निद्रा आदि हैं सो भी मनुष्य और पक्षियोंको एकसा है और इन पक्षियोंको देखो कि ज्ञान होनेपर क्षुधासे पीड़ित जब होते हैं तो मोहमें अपने बच्चों की चोंचोंमें प्रथम कण देते हैं सो हे राजन् ! देखो मनुष्य भी इसी प्रकार अपने पुत्रोंका प्रत्युपकारके लोभसे मोह करते हैं ॥५१॥५२॥ किंतु वे पुत्र उनका कुछ उपकार नहीं करते, यह बात क्या तुम नहीं देखते हो ? तो भी संसारका पालन करनेवाला ऐसा जो महामायाका प्रभाव है उसने भ्रम युक्त मोहकी खाड़ीमें गेर रक्खा है इसमें कुछ आश्चर्य नहीं करना चाहिये यह जगतपति जो विष्णु हैं उनकी योगनिद्रा कहिये

माहामाया हरेश्चैषा तया संमोह्यते जगत् ।
ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ॥५५॥
बलादाकृष्य मोहाय माहामाया प्रयच्छति ।
तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् ॥५६॥
सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ।
सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ॥ ५७ ॥
संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥ ५८ ॥

राजोवाच ॥ ५९ ॥

भगवन्काहि सा देवी महामायेति यां भवान् ॥६०॥
ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज ।
यत्प्रभावा च सा देवी यत्स्वरूपा यदुद्भवा ॥६१॥

तमोगुण प्रधान शक्ति है ॥५३॥५४॥ और यह जो भगवान्‌की माहामाया है उसी से संपूर्ण जगत् मोहको प्राप्त है और वही भगवती देवी ज्ञानियोंके भी चित्तको ॥५५॥ बलसे खींचकर महामाया मोहयुक्त कर देती है और वही इस सम्पूर्ण जगत् और चराचरको उत्पन्न करती है ॥५६॥ और वही प्रसन्न होकर मनुष्योंको मुक्तिके लिये वर प्रदान करती है वही परमा अर्थात् ब्रह्मज्ञानरूप, सनातनी, हेतुरूप है॥५७॥ और वही सर्वेश्वरेश्वरी संसाररूपी बंधनकी कारणरूप है ॥५८॥ राजा बोला ॥५९॥ हे भगवन् ! जिसको आप महामाया कहते हो वह कौन सी देवी है ॥६०॥ और हे द्विज ! वह कैसे उत्पन्न हुई और उसका कर्म क्या है ? और

तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्मविदां वर ॥६२॥

ऋषिरुवाच ॥ ६३ ॥

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ॥६४॥
तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम ।
देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा ॥६५॥
उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते ।
योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ॥ ६६ ॥
आस्तीर्य शेषमभजत्कल्पान्ते भगवान्प्रभुः ।
तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधुकैटभौ ॥६७॥

जिस प्रभाववाली, जैसी उत्पत्तिवाली जिस प्रकार वह उत्पन्न हुई हो ॥६१॥ सो हे ब्रह्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ ! वह संपूर्ण मैं आपसे सुनना चाहता हूं ॥ ६२ ॥ ऋषि बोले ॥ ६३ ॥ वह जगन्मूर्ति अर्थात् जगत्की आश्रयभूत नित्य है और उसीने इस सम्पूर्ण जगत्को फैला रक्खा है ॥ ६४ ॥तो भी उसकी उत्पत्ति तुम मुझसे बहुत प्रकारसे सुनो कि देवताओंके कार्य सिद्ध करनेके लिये जब वह प्रकट होती है ॥६५॥ तब वह संसारमें "उत्पन्न हुई" और "नित्य है" इस प्रकार कही जाती है । कल्पके अन्तमें जब जगत् जलमय हो गया और प्रभु विष्णु भगवान् शेषशय्याको बिछाकर शयन करने लगे तब दो बड़े भयंकर असुर कि जिनका नाम मधु और कैटभ था ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ ।
स नाभिकमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः ६८॥
दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् ।
तुष्टाव योगनिद्रां तामेकाग्रहृदयः स्थितः ॥६९॥
विबोधनार्थाय हरेर्हरिनेत्रकृतालयाम् ।
विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ॥७०॥
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥७१॥

ब्रह्मोवाच ॥ ७२ ॥

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका७३

विष्णुके कानके मैलसे उत्पन्न हुए ब्रह्माजीको मारनेके लिये उद्यत हुए फिर विष्णु भगवान्‌के नाभिकमलमें स्थित प्रजापति ब्रह्माजी ॥६८॥ उन दोनों उग्र असुरोंको और भगवान्‌को भी सोता हुआ देखकर एकाग्र चित्तसे बैठ विष्णुके जगानेके लिये भगवान्‌के नेत्रोंमें प्राप्त हुई योगनिद्रा विश्वेश्वरी जगत् की रचनेवाली तथा जगज्जननी और पालन और नाश करनेवाली और विष्णुके तेजकी अतुल मूर्ति ऐसी निद्रा भगवतीकी स्तुति करने लगे ॥ ॥६९-७१॥ ब्रह्मा बोले ॥७२॥ तुम स्वाहा अर्थात् हवनमें स्वाहा मंत्ररूप हो, श्राद्धादिमें स्वधारूप हो और तुमहीं वषट्कार अर्थात् यज्ञमें देवताओं के बुलानेके लिये मंत्ररूप हो और तुमही सोलह स्वरूपात्मक हो

सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता।
अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः॥७४॥
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा।
त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥७५॥
त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा।
विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने॥७६॥
तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये।
महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः॥७७॥
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी।
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभावनी ॥ ७८ ॥

॥७३॥ तुम अमृतरूप हो, वृद्धि और ह्रास करके रहित हो, नित्य हो, तुम्हारा कभी नाश नहीं है, और ह्रस्व दीर्घ और प्लुतस्वरूपसे स्थित हो, व्यंजनरूप हो, नित्य अविनाशी हो और विशेष करके आपको कोई वर्णन नहीं कर सकता ॥७४॥ तुमही संध्या हो, तुमही सावित्री हो और हे देवि ! तुमही माता ईश्वरी हो। आपही सब विश्वको धारण करती हो और आपही उत्पन्न करती हो॥७५॥ तुमही पालन करती हो और हे देवि ! तुमही सदा भक्षण करती हो और हे जगन्मये ! इस संसारके रचनेके समय तुम सृष्टिरूप हो, पालनके समय स्थिति रूप हो॥७६॥ और हे जगन्मये ! इस जगत्के नाश करनेके समय संसाररूप हो, तुमही महाविद्या हो, तुमही महामाया महामेधा और महास्मृति हो ॥७७॥ और महामोहा महादेवी और महा-

कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ।
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ७९॥
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ।
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥८०॥
शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा ।
सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥८१॥
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ।
यच्च किंचित्क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥८२॥

सुरी हो, तुमही सबकी प्रकृतिरूप हो । तीन गुण जो सत्त्व, रज और तम हैं इनसे युक्त हो ॥७८॥ तुमही कालरात्रि अर्थात ब्रह्माकी प्रलयरूप हो, महारात्रि अर्थात् प्रलयकी रात्रि और दारुण कहिये मोहकी रात्रि हो । तुम श्री कहिये लक्ष्मी बीज हो, तुमही ईश्वरी हो, ह्री कहिये मन्त्रस्वरूपा हो और तुमही बुद्धि तथा ज्ञानकी लक्षणा हो॥७९॥ और तुमही लज्जा, पुष्टि और तुष्टि और शांति तथा क्षमा हो, तुमही खड्गिनी तथा भयंकर स्वरूपा हो, तुमही गदिनी और चक्रिणी हो ॥८०॥ तुमही शंखिनी, और धनुषधारिणी हो और तुम बाण भुशुण्डी और परिघ धारण करनेवाली हो, तुम सौम्य और असौम्यरूपवाली हो और संपूर्ण सुन्दर वस्तुओंसे भी अधिक सुन्दर हो ॥ ८१ ॥ तुमही बीजरूप और उत्तमोंमें प्रधान तथा परमेश्वरी हो और हे अखिलात्मिके ! जो कुछ कहीं सत और असत वस्तु है ॥ ८२ ॥

तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ॥८३॥
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ।
विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च ॥ ८४ ॥
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान्भवेत् ।
सा त्वमित्थंप्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ॥ ८५ ॥
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ।
प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ॥ ८६ ॥
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ ८७ ॥

उन सबकी जो शक्ति है सो तुम हो तो फिर कैसे स्तुतिकी जा सकती हो । आपने भगवान्‌को भी जो कि जगत्‌के उत्पन्न, पालन और नाश करनेवाले हैं ॥८३॥ निद्राके वश कर दिया तो अब तुम्हारी स्तुति करनेके लिये कौन समर्थ है, विष्णुको मुझे और महादेवजीको शरीर धारण ॥८४॥ करा दिया इसलिये अब तुम्हारी स्तुति करनेके लिये किसकी शक्ति है, तुम्हारे जो बड़े प्रभाव कहिये माहात्म्य हैं उनसे इस प्रकार स्तुति की गई हो ॥८५॥ अब तुम दुःखसे नाश करनेके योग्य इन दोनों मधु और कैटभ असुरोंको मोह उत्पन्न करो और जगत्-स्वामी विष्णु भगवान्‌को शीघ्र जगाओ ॥८६॥ और इन बड़े असुरोंको मारनेके लिये ज्ञान कराओ ॥८७॥

ऋषिरुवाच ॥ ८८ ॥

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा ॥ ८९ ॥
विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधुकैटभौ ।
नेत्रास्यनासिकाबाहुहृदयेभ्यस्तथोरसः ॥ ९० ॥
निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।
उत्तस्थौ च जगन्नाथस्ततो मुक्तो जनार्दनः ॥ ९१ ॥
एकार्णवे हि शयनात्ततः स ददृशे च तौ ।
मधुकैटभौ दुरात्मानावतिवीर्यपराक्रमौ ॥ ९२ ॥
क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ ।
समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान्हरिः ॥ ९३ ॥
पञ्चवर्षसहस्राणि बाहुप्रहरणो विभुः ।
तावप्यतिबलोन्मत्तौ महामायाविमोहितौ ॥ ९४ ॥

ऋषि बोले ॥८८॥ जब ब्रह्माजाने योगनिद्रारूप देवीजीकी ऐसी स्तुति की ॥८९॥ तब विष्णुभगवान्‌के जगानेके लिये और मधु-कैटभके मारनेके लिये भगवान्‌के नेत्र, नासिका, बाहु, हृदय और छातीसे ॥९०॥ निकलकर अजन्मा जो ब्रह्माजी हैं तिनको दर्शन देनेके लिये स्थित हुई फिर संसारके स्वामी विष्णु भगवान्‌को भी दुर्गाजीने जगा दिया ॥ ९१ ॥ फिर शेषशय्यासे उठकर भगवान्‌ने अधिक पराक्रमवाले उन मधु कैटभ नामके दोनों दुष्टोंको जलमयमें देखा ॥ ९२ ॥ और क्रोधसे लाल लाल नेत्र किये ब्रह्माजीको भक्षण करनेके लिये यत्न करनेवाले उन दुष्टोंको देख विष्णु भगवान् उठकर उनके साथ युद्ध करने लगे ॥ ९३ ॥ और पांच सहस्र वर्षतक

उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केशवम्॥९५॥

श्रीभगवानुवाच ॥ ९६ ॥

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि ॥ ९७ ॥
किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मया ॥ ९८ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ९९ ॥

वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत् ॥१००॥
विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान्कमलेक्षणः ।
आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ॥१०१॥

ऋषिरुवाच ॥ १०२ ॥

तथेत्युक्त्वा भगवता शंखचक्रगदाभृता ।
कृत्वा चक्रेण वै छिन्ने जघने शिरसी तयोः ॥१०३॥

भगवान् ने बाहुयुद्ध किया, अंतमें बलसे उन्मत्त हुए उन दोनोंको माहामायाने मोहयुक्त कर दिया ॥९४॥ और वे भगवान् से वह बोले-कि तुम हमसे वर मांगो ॥९५॥ भगवान् बोले ॥९६॥ जो तुम दोनों मुझपर प्रसन्न हो तो मुझसे मारे जाओ ॥९७॥ इसके अतिरिक्त और क्या वर माँगू ? इतना ही मैंने वर मांगा है ॥ ९८ ॥ ऋषि बोले ॥ ९९ ॥ जब इस प्रकार वे दोनों वचनसे बद्ध हो गये तब संपूर्ण जगत्को जलमय ॥१००॥ देखकर उन दोनोंने कमलनेत्र भगवान्से कहा कि जहां पृथ्वी जलसे भरी न हो तहां तुम हमको मारो ॥ ॥१०१॥ ऋषि बोले ॥१०२॥ शंख चक्र गदाको धारण किये

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् ।
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ॥१०४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये मधुकैटभवधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

उवाच ॥१४॥ अर्धानि ॥२४॥ श्लोकः ॥६६॥ एवं ॥१०४॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः

अस्य श्रीमध्यमचरित्रस्य विष्णुर्ऋषिः ॥ महालक्ष्मी-र्देवता ॥ उष्णिक्छन्दः ॥ शाकम्भरी शक्तिः ॥ दुर्गा बीजम् ॥ वायुस्तत्त्वम् ॥ यजुर्वेदो मूर्तिः ॥ महालक्ष्मीप्रीत्यर्थं मध्यमचरित्रपाठे विनियोगः ॥

विष्णु भगवान्‌ने "अच्छा" ऐसा कहकर और अपनी जांघको फैलाकर चक्रसे उन दोनोंका शिर काट डाला ॥१०३॥ इस प्रकार ब्रह्मासे स्तुति की गई यह देवी स्वयं उत्पन्न हुई है इस देवीका माहात्म्य और सुनो मैं कहता हूं ॥ १०४ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया देवीमाहात्म्यका प्रथम अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ॥ १ ॥

मध्यम चरित्रके विष्णु ऋषि हैं, महालक्ष्मी देवता हैं उष्णिक् छन्द है, शाकभरी शक्ति है, दुर्गा बीज है, वायु तत्त्व है, यजुर्वेद मूर्ति है, महालक्ष्मीके प्रीत्यर्थ इस मध्यमचरित्रका विनियोग है (जल छोड़ना) और महालक्ष्मीका ध्यान पढ़कर चित्तमें

ॐ अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ।
शूलंपाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरि-
भमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ २ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

देवासुरमभूद्युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा ।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥ २ ॥
तत्रासुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम् ।
जित्वा च सकलान्देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥३॥
ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम् ।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेशगरुडध्वजौ ॥ ४ ॥

ऐसा स्मरण करना कि रुद्राक्षकी माला, परशु, गदा, बाण, कुलिश, पद्म, धनु, कमंडलु, दंड, शक्ति, तलवार, ढाल, कमल, घंटा, सुरापात्र, शूल, फांसी, सुदर्शनचक्र इनको हाथोंमें धारण किये मूंगेके समान कांतिवाली महिषासुरमर्दिनी कमल पर स्थित ऐसी महालक्ष्मीका भजन करता हूं ॥ २ ॥

ऋषि बोले ॥१॥ प्रथम कल्पमें देवता और राक्षसोंका पूरे सौ वर्ष युद्ध हुआ, उस समय राक्षसोंका स्वामी महिषासुर था और देवताओंका स्वामी इन्द्र था ॥ २ ॥ उस युद्ध में अधिक पराक्रमवाले असुरोंने देवताओंकी सेनाको हरा दिया और महिषासुर सब देवताओंको जीतकर आप इंद्र बन बैठा ॥३॥ फिर हारे हुए देवता पद्मयोनि ब्रह्माजीको अग्रगण्य

तथा वृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टितम् ।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभवविस्तरम् ॥ ५ ॥
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च ।
अन्येषां चाधिराकारान्स स्वयमेवाधितिष्ठति ॥६॥
स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि ।
विचरंति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥ ७ ॥
एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम् ।
शरणं वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम्॥८॥
इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः ।
चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटीकुटिलाननौ ॥ ९ ॥

करके जहां विष्णु और महादेवजी थे वहां गये ॥४॥ देवताओं ने शिवजीसे और भगवान्‌के सामने जो कुछ वृत्तांत हुआ था और जो कुछ महिषासुरने किया था और जिस प्रकार देवताओंकी हार हुई थी सो सब विस्तारपूर्वक कहा कि।५॥ उस महिषासुरने सूर्य, इंद्र, अग्नि, वायु, चंद्रमा, यम, वरुण, इनके और अन्य देवताओंके अधिकारोंको अपने हाथमें कर लिये हैं ॥६॥ उस दुष्ट महिषासुरने सब देवताओंको स्वर्गसे निकाल दिया है इसलिये वे सब देवता भूमिपर मनुष्योंके समान घूमते हैं ॥७॥ इस प्रकार जो कुछ उस असुरने किया वह आपसे कह चुके और हम आपकी शरणमें आये हैं आप उसके मारने का उपाय सोचिये॥८॥देवताओंकी ऐसी वाणी सुनकर

ततोऽति कोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः ।
निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शंकरस्य च ॥ १० ॥
अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः ।
निर्गतं सुमहत्तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ॥ ११ ॥
अतीव तेजसःकूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम् ।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम् ॥१२॥
अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम् ।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा ॥ १३ ॥
यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् ।
याम्येन चाभवन्केशा बाहवो विष्णुतेजसा ॥१४॥

भगवान् और शिवजीको बड़ा क्रोध हुआ और दोनोंनेअपने अपने मुखकी भ्रुकुटियाँ चढ़ाईं ॥९॥ तब तो अत्यन्त कोपसे पूर्णभगवान्, ब्रह्मा और शिवजीके मुखसे एक बड़ा तेज निकला ॥१०॥ और इंद्र आदि दूसरे देवताओंके शरीरसे महान् तेज निकला और सब मिलकर इकट्ठा हो गया ॥११॥ फिर उन देवताओं ने उस अधिक तेजके पुञ्जको जिसकी ज्वाला संपूर्ण दिशाओंमें फैल गई थी पर्वतके समान जलते हुये देखा ॥ १२ ॥ फिर देवताओंके शरीरसे उत्पन्न हुआ और एकत्र हुआ और अपनी कांतिसे तीनों लोकमें प्रकाश करने वाला वह तेज एक स्त्रीरूप हो गया ॥१३॥ फिर जो तेज शिवजीसे उत्पन्न हुआ था वह उस स्त्री का मुख बन गया, धर्मराजके तेजसे बाल हो गये और विष्णुके तेजसे भुजा हो गई ॥ १४ ॥

सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाभवत् ।
वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः ॥१५॥
ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योऽर्कतेजसा ।
वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च नासिका ॥१६॥
तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा ।
नयनत्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा ॥ १७ ॥
भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च ।
अन्येषां चैव देवानां संभवस्तेजसां शिवा ॥१८॥
ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम् ।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥१९॥

चन्द्रमाके तेजसे दोनों कुच हुए और इन्द्रके तेजसे उदर हुआ, वरुणके तेजसे जांघ और घोंटू उत्पन्न हुए और पृथ्वीके तेजसे नितंबभाग हुआ॥ १५॥ ब्रह्माके तेजसे चरण हुये, सूर्यके तेजसे पैरोंकी उंगली, वसुके तेजसे हाथोंकी अंगुली उत्पन्न हुई और कुवेरके तेजसे नाक हुई ॥१६॥फिर प्रजापतिके तेजसे उसके दांत और अग्निके तेजसे तीनों नेत्र उत्पन्न हुए ॥१७॥ दोनों सन्ध्याओंके तेजसे भ्रुकुटी हुई और वायुके तेजसे कान हुए । और दूसरे जो देवता थे उनके तेजोंके पुंजसे शिवारूप दुर्गा उत्हन्न हुई ॥ १८ ॥ तदनंतर संपूर्ण देवताओंके तेजके समूहसे उत्पन्न हुई उन देवीजीको देखकर महिषासुरसे पीडित

शूलं शूलाद्विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक् ।
चक्रं च दत्तवान्कृष्णः समुत्पाट्य स्वचक्रतः॥२०॥
शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः ।
मरुतो दत्तवांश्चापं बाणपूर्णे तथेषुधी ॥ २१ ॥
वज्रमिन्द्रः समुत्पाट्य कुलिशादमराधिपः ।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद्गजात् ॥२२॥
कालदण्डाद्यमो दंडं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ ।
प्रजापतिश्चाक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥२३॥
समस्तरोमकूपेषु निजरश्मीन्दिवाकरः ।
कालश्च दत्तवान्खड्गं तस्यै चर्म च निर्मलम्॥२४॥
क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे ।
चूडामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ॥२५॥

सब देवता प्रसन्न हो गये॥१९॥फिर शिवजी ने अपने त्रिशूलमेंसे शूल निकालकर उन्हें दिया, भगवान्ने चक्रमेंसे चक्र निकालकर दिया ॥२०॥वरुणने शंखमेंसे शंख दिया,अग्निने शक्ति दी और पवनने धनुष और बाणोंसे पूर्ण तरकस दिये ॥२१॥ और देवताओंके अधिपति इंद्रने अपने वज्रमेंसे वज्र और ऐरावत हाथीमेंसे घंटा निकालकर उसे दिया ॥२२॥ यमराजने दंडमेंसे दंड निकालकर दिया, वरुणने फांसीमेंसे फांसी निकालकर दी । दक्षप्रजापतिने रुद्राक्षकी माला दी और ब्रह्माने कमंडलु दिया ॥ २३ ॥ सूर्यने संपूर्ण रोमोंमेंसे अपनी किरणोंको दिया और कालने उसको सुन्दर ढाल और खड्ग दिये ॥ २४ ॥ समुद्रने निर्मल मोति-

अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान्सर्वबाहुषु ।
नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥ २६ ॥
अंगुलीयकरत्नानि समस्तास्वंगुलीषु च ।
विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चातिनिर्मलम् ॥२७॥
अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथाऽभेद्यं च दंशनम् ।
अम्लानपंकजां मालां शिरस्युरसि चापराम् ॥२८॥
अददज्जलधिस्तस्यै पंकजं चातिशोभनाम् ।
हिमवान्वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ॥२९॥
ददावशून्यं सुरया पानपत्रं धनाधिपः ।
शेषश्चसर्वनागेशो महामणिविभूषितम् ॥ ३० ॥

योंका कंगन हार, दो उज्ज्वल वस्त्र दिये और सुंदर चूडामणि कुंडल और कगंन॥२५॥ अर्धचंद (श्वेत बेना)सब भुजाओंमें बाजूबंद,अत्यंत सुंदर पाजेब और एक अनुपम कंठका आभूषण॥२६॥और संपूर्ण अंगुलियोंमें सुंदर अंगूठियां और निर्मल फरसा विश्वकर्माने उसे दिया ॥ २७ ॥ अनेक प्रकारके अस्त्र और जो किसीसे कट न सके ऐसा कवच दिया और समुद्रने नवीन खिले हुए कमलपुष्पोंकी माला कण्ठके लिये और शिरपर धारण करने के लिये दूसरी माला दी॥२८॥ और एक अत्यन्त सुंदर कमल दिया । हिमवानने उसे चढ़नेके लिये सिंह दिया और अनेक प्रकारके रत्न दिये ॥२९॥ कुबेरने मदिरासे भरा हुआ एक प्याला दिया और संपूर्ण नागोंके स्वामी और संपूर्ण पृथिवीको अपने शिरपर

नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथ्वीमिमाम् ।
अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥ ३१ ॥
सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः ।
तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ॥३२॥
अमायातातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत् ।
चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ॥३३॥
चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः ।
जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ॥३४॥
तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्तिनम्रात्ममूर्तयः ।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः ॥ ३५ ॥

धारण करनेवाले शेषजीने उसको एक बड़े रत्नोंसे भूषित नागहार दिया और अन्य देवताओंने भी भूषण और आयुधोंसे देवीका सन्मान किया और फिर देवीने बड़ा घोर शब्द किया और बारंबार अट्टहास कहिये खिलखिलाकर हँसने लगी। उनके घोर नादसे सम्पूर्ण आकाशमण्डल भर गया ॥३०॥३१॥३२॥ और फिर आकाशसे एक असंभव और बड़ा भारी प्रतिशब्द हुआ सब लोग डगमग डगमग करने लगे और समुद्र कांप उठे ॥३३॥ पृथ्वी हिलने लगी, सम्पूर्ण पहाड़ अचल-विचल होने लगे और देवता प्रसन्नतासे उन सिंहवाहिनी भगवतीके सामने जय जयशब्दकरनेलगे॥३४॥औरभक्तिसे अपनेअपनेशरीरको झुकाकर देवीको देख स्तुति करने लगे । फिर असुरोंने सम्पूर्ण

सन्नद्धाखिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः ।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः॥३६॥
अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः ।
स ददर्श ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा ॥३७॥
पादाक्रान्त्यानतभुवं किरीटोल्लिखिताम्बरम् ।
क्षोभिताशेषपातालांधनुर्ज्यानिःस्वनेन ताम् ॥३८॥
दिशो भुजसहस्रेण समंताद्व्याप्य संस्थिताम् ।
ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुरद्विषाम् ॥ ३९ ॥
शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपितदिगन्तरम् ।
महिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः ॥ ४० ॥

त्रिलोकीको संचालित देखकर ॥३५॥ अपनी अपनी सेना तैयार की और हाथोंमें अस्त्र ले लिया और महिषासुर क्रोधसे आः ! यह क्या है ? ऐसा कहकर ॥ ३६ ॥ संपूर्ण असुरोंको साथ लेकर उस शब्दकी ओर भागा और फिर उसने वहां उन देवीजीको देखा, जिनकी कांति तीनों लोकमें व्याप्त है ॥३७॥ और जो अपने चरणके आक्रमणसे भूमिको दबा रही है, मुकुटसे आकाशको छू रही है, धनुषकी प्रत्यंचाकी टंकारसे जिन्होंने सम्पूर्ण पातालोंको कंपायमानकर रक्खा है ॥३८॥ और अपनी सहस्रभुजाओंसे दिशाओंके चारों ओर व्याप्त होकर स्थित है ऐसी उन देवीके साथ असुरोंका युद्ध होना आरंभ हुआ ॥३९॥ और अनेक-अनेक प्रकारके

युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरंगबलान्वितः ।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महासुरः ॥ ४१ ॥
अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण महाहनुः ।
पंचाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः ॥ ४२ ॥
अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे ।
गजवाजिसहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥ ४३ ॥
वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत ।
बिडालाख्योऽयुतानां च पंचाशद्भिरथायुतैः ॥४४॥
युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः ।
अन्ये च तत्रायुतशो रथनागहयैर्वृताः ॥ ४५ ॥

चलाये और फेंके हुए अस्त्र शस्त्रोंसे दिशा और आकाश प्रकाशित हो गये, फिर महिषासुरकी सेनाका नायक महा असुर चिक्षुर नाम ॥४०॥ युद्ध करने लगा और चामर नामकने अन्य चतुरंगिणी सेनाओंको साथ लेकर देवीसे युद्ध किया और उदग्र नामक महाअसुर साठ हजार रथोंको साथ ले जाकर ॥ ४१ ॥ और महाहनु नाम असुर एक करोड़ रथ ले जाकर लड़ने लगे और असिलोमा नाम महासुर पांच करोड़ रथ सेनाको साथ लेकर युद्ध करने लगा ॥ ४२ ॥ बाष्कल नाम असुर साठ लाख रथ और अनेक हाथी घोड़ोंकी सेनासहित रणमें युद्ध करने लगा ॥४३॥ और उस युद्धमें बिडाल नाम राक्षस एक करोड़ रथसहित लड़ा और हारनेके अनन्तर पचास लाख रथोंको साथ ले जाकर फिर युद्ध करने लगा ॥४४॥ और भी वहां रथ हाथी घोड़ों सहित दश हजार

युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महासुराः ।
कोटिकोटिसहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥४६॥
हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः ।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ॥४७॥
युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः परशुपट्टिशैः ।
केचिच्च चिक्षिपुःशक्तीःकेचित्पाशांस्तथापरे॥४८॥
देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः ।
सापिदेवीततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका॥४९॥
लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्रवर्षिणी ।
अनायस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ॥५०॥
मुमोचासुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी ।
सोऽपि क्रुद्धो धुतसटो देव्या वाहनकेसरी ॥५१॥

बड़े बड़े असुर युद्धमें भगवतीके साथ लड़े ॥४५॥ फिर महिषासुर आप करोड़ों रथ हाथी और घोड़ोंकी सेनाको साथलेकर युद्धमें गया फिर तो असुर तोमर भिन्दिपाल शक्ति मूसल खड्ग फरसा और पट्टिश इन शस्त्रोंको लेकर देवीके साथ युद्धमें लड़ने लगे, कोई शक्ति फेंकते थे, दूसरे पास फेंकते थे ॥४६॥ ॥४७॥४८॥ और वे खड्गके प्रहारोंसे देवीके मारनेके लिये दौड़े फिर उस भगवतीने भी उनके शस्त्र अस्त्रोंको ॥ ४९ ॥ बातकी बातमें अपने शस्त्र अस्त्र बरसाकर काट डाले और प्रसन्न हुई, तब देवता और ऋषियोंने स्तुति की ॥ ५० ॥ फिर भगवतीने असुरोंके देहोंपर अस्त्र शस्त्र फेंके और देवीका वाहन

चचारासुरसैन्येषु वनेष्विव हुताशनः ।
निःश्वासान्मुमुचेयांश्चयुध्यमानारणेऽम्बिका॥५२॥
त एव सद्यः संभूता गणाः शतसहस्रशः ।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासिपट्टिशैः ॥ ५३ ॥
नाशयन्तोऽसुरगणान्देवीशक्त्युपबृंहिताः ।
अवादयन्त पटहान् गणाः शंखांस्तथापरे ॥५४॥
मृदंगांश्च तथैवान्ये तस्मिन्युद्धमहोत्सवे ।
ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्ति (वृ) ऋष्टिभिः॥५५॥
खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान् ।
पातयामासचैवान्यान्घण्टास्वनविमोहितान्॥५६॥

सिंह भी क्रोध करके अपनी सटाओंको कँपाने लगा ॥५१॥ और असुरोंकी सेनामें वह सिंह वनमें अग्निके समान विचरने लगा और रणमें युद्ध करती हुई देवीने जिन असुरोंको सिस-कते हुए छोड़े ॥५२॥ वे ही सद्यः सहस्रों गण हो गये और वे फरसा, भिंदिपाल, तलवार, पट्टिश लेकर लड़ने लगे ॥५३॥ और देवीकी शक्तिसे बढ़े हुए गण असुरोंका नाश करने लगे और उस युद्धरूपी महोत्सवमें ढोल और शंख बजाने लगे ॥५४ और कितने ही मृदंग बजाने लगे, फिर देवीने त्रिशूल, गदा और शक्ति इनकी वृष्टिसे ॥५५॥ और खड्गोंसे सैकड़ों बार बड़े बड़े असुरोंको मारा और कितने ही दैत्योंको जो कि घंटेके शब्दसे मूर्च्छित हो गये थे उन्हें पाशसे बांधकर पृथ्वीपर

असुरान्भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् ।
केचिद्द्विधाकृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे ॥५७॥
विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते ।
वेमुश्च केचिद्रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ॥ ५८ ॥
केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि ।
निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे ॥ ५९ ॥
सेनानुकारिणः प्राणान्मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः ।
केषांचिद्बाहवश्छिन्नाश्छिन्नग्रीवास्तथापरे ॥ ६० ॥
शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः ।
विच्छिन्नजंघास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः ॥ ६१ ॥

पटक दिया ॥५६॥ और कितनों हीको खैंच खैंच लिये और कितनोंहीको अपने खड्ग की तीक्ष्ण धारोंसे दो खंड कर दिये ॥५७॥ और कितनोंको गदाके प्रहारसे ऐसा मारा कि वे पृथ्वीपर लोट गये और बहुतेरोंको मूसलसे ऐसा धुना कि मुखसे रुधिर गेरने लगे ॥५८॥ कितने तो छातीमें त्रिशूलके लगनेसे विदीर्ण हुए धरतीपर गिर पड़े और कितनोंको संग्राम खेतमें शरोंके समूहोंसे छेद डाला ॥५९॥ अन्तमें सेनाके साथवाले असुर अपने-अपने प्राण छोड़ दिये, कितनेकी भुजाएँ कट गईं, कितनोंहीकी ग्रीवाएँ कट गईं ॥६०॥ कितनोंहीके शिर कटके गिरे, कई बीचमेंसे कट गये, कई बड़े-बड़े असुरोंकी जंघाएँ कट गईं और वे भूमिपर गिर

एकबाह्वक्षिचरणाः केचिद्देव्या द्विधा कृताः ।
छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ॥६२॥
कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः ।
ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः ॥ ६३ ॥
कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्गशक्त्यृष्टिपाणयः ।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः ॥६४॥
पातितै रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा ।
अगम्या साभवत्तत्र यत्राभूत्स महारणः ॥ ६५ ॥
शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र विसुस्रुवुः ।
मध्ये चासुरसैन्यस्य वारणासुरवाजिनाम् ॥६६॥

पड़े ॥६१॥ देवीने कितनेही असुरोंको एक आंख और एक चरणसहित बीचमेंसे चीर डाले और कितनेही असुर जिनके शिर कट कट कर गिर पड़े थे फिर उठ बैठे ॥६२॥ और रुंडोंने बड़े बड़े आयुध लेकर देवीसे युद्ध किया और कितनेही असुर उस युद्धमें बाजेकी लयके अनुसार नाचने लगे ॥६३॥ और उस युद्धमें कितनेही बड़े-बड़े असुर जिनके शिर कट गये थे और कबंध रह गये थे वे हाथमें खड्ग, शक्ति और दोनों ओर धारवाली तलवारको लेकर ठहरो ठहरो ऐसा कहने लगे ॥६४॥ और जहां वह युद्ध हुआ था वहां गिरे हुए रथ, हाथी और घोड़ोंसे पृथ्वी ऐसी हो गई कि कोई जा नहीं सके ॥ ६५ ॥ और वहां शीघ्र ही रणके मध्यमें असुरों की

क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदारुमहाचयम् ॥ ६७ ॥
सच सिंहो महानादमुत्सृजन्धुतकेसरः ।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥ ६८ ॥
देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं तथासुरैः ।
यथैषां तुतुषुर्देवाः पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ॥ ६९ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
महिषासुरसैन्यवधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

उवाच॥१॥श्लोकाः॥६८॥ एवं ॥६९॥एवमादितः॥१७३॥

सेनाके हाथी, असुर और घोड़ों के रुधिरके समूहसे बड़ी नदियां बहने लगीं ॥६६॥ और फिर एक क्षणभरमें जगदंबाने असुरोंके बड़े सेनापतिको ऐसे नाश कर दिया कि जिस प्रकार अग्नि तृण और काष्ठके बड़े समूहको जला देती है ॥६७॥ फिर वह सिंह बड़ा नाद करता हुआ, अपने सटाके बालोंको कंपाता हुआ, असुरोंके शरीरोंसे प्राणोंको ही मानो ढूँढ़ने लगा ॥६८॥ और जिस समय वहां देवीके उन गणोंने असुरोंके साथ युद्ध किया था उस समय देवताओंने प्रसन्न होकर आकाशसे पुष्पों की वर्षा की ॥६९॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ देवीमाहात्म्यके
दूसरे अध्यायका हिन्दी अनुवाद समाप्त हुआ ।

अथ तृतीयोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

निहन्यमानं तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः ।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद्ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् ॥२॥
स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः ।
यथा मेरुगिरेः शृङ्गं तोयवर्षेण तोयदः ॥ ३ ॥
तस्य च्छित्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् ।
जघान तुरगान्बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ॥ ४ ॥
चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चातिसमुच्छ्रितम् ।
विव्याध चैव गात्रेषु च्छिन्नधन्वानमाशुगैः ॥ ५ ॥
स छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः ।
अभ्यधावत तां देवीं खड्गचर्मधरोऽसुरः ॥ ६ ॥

ऋषि बोले ॥१॥ इस सेनाको नाश हुई देख महिषासुरकी सेनाका नायक महासुर चिक्षुर क्रोध करके देवीके साथ युद्ध करनेके लिये गया ॥२॥ और उस संग्राममें उसने देवीके ऊपर ऐसे बाणोंकी वर्षा की जैसे मेघ सुमेरु पर्वतके शिखरपर जल बरसाता है ॥३॥ फिर देवीने अपनी लीलासेही उसके बाणोंके समूहको काटकर घोड़ोंको और घोड़ोंके सारथियोंको मारा ॥४॥ और तत्काल ही उसके धनुष और बड़ी ऊंची फहराती हुई ध्वजाको काट डाला और फिर उस टूटे हुए धनुषवालेके शरीरोंको बाणोंसे छेद डाला ॥५॥ फिर जब उसका धनुष कट गया, रथ टूट गया

सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि ।
आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान् ॥ ७ ॥
तस्या खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन ।
ततो जग्राह शूलं स कोपादरुणलोचनः ॥ ८ ॥
चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः ।
जाज्वल्यमानं तेजोभी रविबिम्बमिवाम्बरात् ॥९॥
दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत ।
तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महासुरः ॥ १० ॥
हते तस्मिन्महावीर्यें महिषस्य चमूपतौ ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ॥ ११ ॥

और सारथी मारे गये तब वह असुर अपनी पैनी ढाल तलवारको लेकर देवीके सामने दौड़ा ॥६॥ और अपनी पैनी धारवाली तलवारसे सिंहके मस्तकपर प्रहार करके बड़े वेगसे उसने तलवारको देवीके बाईं भुजामें मारी ॥ ७ ॥ और हे राजा ! फिर वह तलवार देवीको भुजासे स्पर्श होते ही फट गई तब उस असुरने कोपसे लाल-लाल नेत्र करके त्रिशूल लिये ॥८॥ और उसने उसे भद्रकालीके ऊपर फेंका । देवीने उस त्रिशूलको तेजोंसे जाज्वल्यमान आकाशसे गिरते हुए दूसरे सूर्यके मंडलके समान ॥९॥ देखकर अपने शूलको छोड़ा तब उस त्रिशूलने असुरके त्रिशूलके सैकड़ों टुकड़े करके उस असुरको भी मार डाला ॥१०॥ फिर जब महिषासुरका बड़ा

सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् ।
हुङ्काराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥१२॥
भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः ।
चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत् ॥१३॥
ततः सिंहः समुत्पत्य गजकुंभान्तरस्थितः ।
बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥ १४ ॥
युध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ ।
युयुधातेऽतिसंरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः ॥ १५ ॥
ततो वेगात्खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा ।
करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्कृतम् ॥ १६ ॥

पराक्रमी सेनानी मर गया तब देवताओंका वैरी चामर नामक असुर हाथी पर बैठकर आया ॥११॥ और उसने देवीके ऊपर शक्ति छोड़ी, फिर भगवतीने शीघ्रही हुंकारशब्दसे उस प्रभा-रहित शक्तिको धरतीमें गिरा दिया ॥१२॥ फिर उस चामरने उस टूटी हुई और गिरी हुई शक्तिको देखकर क्रोधित हो शूल फेंका, देवाने उसे भी अपने बाणोंसे काट गिराया॥१३॥ फिर सिंह उछलकर हाथीके मस्तकपर जा बैठा और देवताओंके शत्रु उस असुरसे भुजायुद्ध करने लगा ॥ १४ ॥ पश्चात् वे दोनों युद्ध करते-करते हाथीसे नीचे गिर पड़े और बड़े-बड़े प्रहा-रोंसे उन्होंने लड़ना आरंभ किया ॥१५॥ फिर सिंहने आका-शमें उछलकर और वहांसे भूमिपर कूदकर अपने पंजोंके

उदग्रश्च रणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः ।
दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥ १७ ॥
देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् ।
बाष्कलं भिंदिपालेन बाणैस्ताम्रं तथांधकम् ॥१८॥
उग्रास्यमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम् ।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥ १९ ॥
बिडालस्यासिना कायात्पातयामास वै शिरः ।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम् ॥ २० ॥
एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः ।
माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान् ॥२१॥

प्रहारसे उस चामरका शिर अलग कर दिया ॥१६॥ और देवीजीने रणमें उस भयंकर और उग्र असुरको पाषाणों वृक्षों-दाँतों घूँसों तथा लातोंसे गिरा दिया ॥ १७॥ फिर देवीने क्रोधसे गदाप्रहारों द्वारा उद्धत नाम असुरका चूरा कर डाला और भिन्दिपालसे बाष्कलको और बाणोंसे ताम्र और अन्धकको मारा ॥१८॥ और तीन नेत्रवाली उस परमेश्वरीने उग्रास्य उग्रवीर्य और महाहनुको त्रिशूलसे मार डाला ॥१९॥ और अपने खड्गसे बिडाल नाम असुरके शिरको शरीरसे अलग गिरा दिया और दुर्धर और दुर्मुख इन दोनोंको शरोंसे यमलोकको पहुँचा दिया ॥२०॥ इस प्रकार जब सब सेनाका नाश हो गया तब महिषासुर भैंसेका रूप धरके देवीके गणोंको

काांश्चित्तुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान् ।
लांगूलताडितांश्चान्यान्शृङ्गाभ्यां च विदारितान्२२
वेगेन कांश्चितपरान्नादेन भ्रमणेन च ।
निःश्वासपवनेनान्यान्पातयामास भूतले ॥ २३ ॥
निपात्य प्रथमानीकमभ्यधावत सोऽसुरः ।
सिंहं हन्तुं महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका॥२४॥
सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुण्णमहीतलः ।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च ॥२५॥
वेगभ्रमणविक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत ।
लांगूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥२६॥

भय दिखाने लगा ॥२१॥ कितनोंको मुखके प्रहारसे और कितनोंको खुरके प्रहारोंसे, कितनोंको पूंछके प्रहारोंसे और कितनोंको सींगोंसे नाश करने लगा ॥२२॥ और कितनोंको बड़े वेगसे, कितनोंको नादसे और कितनोंको चारों ओरसे घूम कर और कितनोंको अपने श्वासकी पवनसे पृथ्वीतलमें गिरा दिया ॥२३॥ फिर वह असुरगणोंकी सेनाको गिराकर देवीके सिंहको मारनेके लिए झपटा तब देवीने कोप किया ॥२४॥ बड़ा पराक्रमी वह असुर भी क्रोधसे पृथ्वीतलको खोदने लगा और सींगोंसे ऊंचे-ऊंचे पर्वतोंको फेंकने लगा और शब्द करने लगा ॥२५॥ और उसके वेगपूर्वक घूमनेसे खुदी हुई पृथिवी मृदुल हो गई और पूंछसे ताडित समुद्र चारों ओर फैलने लगा ॥२६॥

धुतशृङ्गविभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः ।
श्वासानिलास्ताःशतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः॥२७॥
इति क्रोधसमाध्मातमापतन्तं महासुरम् ।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्वधाय तदाकरोत्॥२८॥
सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महासुरम् ।
तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे ॥२९॥
ततः सिंहोऽभवत्सद्यो यावत्तस्याम्बिका शिरः ।
छिनत्ति तावत्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत ॥ ३० ॥
तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः ।
तं खड्गचर्मणा सार्धं ततः सोऽभून्महागजः ॥३१॥

कंपायमान सींगोंसे फाड़े हुए बादलोंके टुकड़े-टुकड़े हो गये और उसके श्वासकी पवनसे सैकड़ों पर्वत आकाशसे गिर पड़े ॥२७॥ इस प्रकार क्रोधपूर्वक झपटते हुए उस महाअसुरको देखकर उस चण्डिकादेवीने उसके मारनेके लिये क्रोध किया ॥२८॥ और उसके पास अपना पाश फेंककर उस महाअसुरको बांध लिया फिर उस असुरने महारणमें बँध जानेपर अपना महिषका स्वरूप छोड़ दिया ॥२९॥ और शीघ्रही सिंहरूप हो गया और ज्योंही अम्बिकादेवी इसका शिर काटे तबतक खड्ग हाथमें लिये पुरुषरूप दीखने लगा ॥३०॥ तब तो देवीने शीघ्र ही उसे बाणोंसे छेद डाला फिर वह ढाल तलवार लिये

करेण च महासिंहं तं चकर्ष जगर्ज च ।
कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥ ३२ ॥
ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः ।
तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥३३॥
ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् ।
पपौ पुनःपुनश्चैव जहासाऽरुणलोचना ॥३४ ॥
ननर्द चासुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः ।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान्॥३५॥
सा च तान्प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः ।
उवाच तं मदोद्धूतमुखरागाकुलाक्षरम् ॥३६॥

बड़ा हाथी हो गया ॥३१॥ और अपनी सूंडसे सिंहको खींचने लगा और गर्जने लगा । तब देवीने सिंहको खैंचते हुए उस हाथीकी सूंडको खड्गसे काट डाला ॥३२॥ फिर उस महासुरने महिषका रूप धारण कर लिया और पूर्वोक्त प्रकारसे त्रिलोकीमें चराचरको दुःख देने लगा ॥३३॥ तब जगत्की माता चण्डिकाने क्रोधकर वारंवार उत्तम वारुणीका पान किया और लाल लाल नेत्र करके हँसने लगीं ॥३४॥ फिर वह असुर भी बल और वीर्यसे मतवाला होकर घोर शब्द करने लगा और सींगोंसे पर्वतोंको उठा-उठा कर देवीके ऊपर फेंकने लगा ॥ ३५ ॥ और देवीने उस असुरके फेंके हुए पर्वतोंको अपने बाणोंके समूहोंसे चूर्णकर डाला और मद

देव्युवाच ॥ ३७ ॥

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत्पिबाम्यहम् ।
मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥३८॥

ऋषिरुवाच ॥ ३९ ॥

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महासुरम् ।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत् ॥ ४० ॥
ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः ।
अर्धनिष्क्रान्त एवासीद्देव्या वीर्येण संवृतः ॥४१॥
अर्धनिष्क्रान्त एवाऽसौ युद्धयमानो महासुर ।
तया महासिना देव्या शिरश्छित्त्वा निपातितः ॥४२॥

पीनेके कारण जिसका मुख रंगीन हो रहा है ऐसी वह देवी (मद्य पीनेवालोंका जैसा स्वभाव होता है) मुखसे अस्त-व्यस्त स्पष्ट कहने लगीं ॥ ३६ ॥ देवी बोली ॥ ३७ ॥ हे मूढ़ ! तू क्षणभरतक गर्ज ले गर्ज ले कि जब तक मैं मद्यपान कर लूँ और जब मैं तुझे इस संग्राममें मारूँगी तब देवता शीघ्र गर्जेंगे ॥ ३८ ॥ ऋषि बोले ॥ ३९ ॥ देवी ऐसे कहकर और कूद-कर उस महासुरके ऊपर चढ़ बैठी और उसे अपने चरणसे दबा-कर उसके गलेमें त्रिशूलसे छेदने लगीं ॥ ४० ॥ फिर वह असुर भी देवीके चरणसे दबनेके कारण देवीके पराक्रमके सामने अस्त हो गया, किंतु अपने मुखकी ओरसे आधा शरीर निकलकर देवीसे लड़ने लगा ॥ ४१ ॥ फिर देवीने आधे शरीरसे लड़ते हुए उस महासुरका शिर बड़े खड्गसे काटकर गेर दिया ॥ ४२ ॥

ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं ननाश तत् ।
प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवतागणाः ॥४३॥
तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः ।
जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ ४४ ॥

इति देवीमा० महिषासुरवधो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥
उवाच॥३॥ श्लोकाः॥४१॥ एवं ॥४४॥ एवमादितः ॥२१७॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये तस्मिन्दुरा-
त्मनि सुरारिबले च देव्या । तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्र
शिरोधरांसा वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः॥२॥

और फिर देवीने हाहाकार करती हुई असुरकी सम्पूर्ण सेनाको नाश कर डाला और फिर सम्पूर्ण देवताओंके समूह बड़े प्रसन्न हुए ॥४३॥ और देवता बड़े-बड़े महर्षियोंके सहित उस देवीकी स्तुति करने लगे, गन्धर्व गाने लगे और अप्सराएं नृत्य करने लगीं ॥ ४४ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया तीसरे अध्यायका हिन्दीअनुवाद समाप्त ।

ऋषि कहने लगे ॥ १ ॥ जब भगवती देवीने देवताओंके शत्रु पराक्रमी उस दुष्ट महिषासुरको मार डाला तब इन्द्र आदि देवताओंके समूह, जिनके सुन्दर शरीर अत्यन्त

देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या निःशेषदे-
वगणशक्तिसमूहमूर्त्या । तामम्बिकामखिलदेव-
महर्षिपूज्यां भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि
सा नः ॥ ३ ॥ यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च । सा चण्डि-
काखिलजगत्परिपालनाय नाशाय चाशुभभ-
यस्य मतिं करोतु ॥४॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां
भवनेष्वलक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु
बुद्धिः । श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा तां
त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ ५ ॥

हर्षके कारण पुलकायमान हो गये थे अपने शिर, कण्ठ और कन्धोंको झुकाकर प्रणाम करके अनेक प्रकारकी वाणियोंसे दुर्गाकी स्तुति करने लगे ॥ २ ॥ जिन भगवतीने अपनी शक्तिसे इस संपूर्ण जगत्को विस्तारित किया है और जो सम्पूर्ण देव-गणोंकी शक्तिसमूहकी मूर्ति है और जो सम्पूर्ण देवता और महर्षियोंसे पूजनेके योग्य है ऐसी उस अम्बिकाको हम सब भक्तिपूर्वक प्रणाम करते हैं वह हमारा कल्याण करें ॥ ३ ॥ जिनके अतुल प्रभाव और बलका भगवान् विष्णु, ब्रह्मा और महादेव वर्णन नहीं कर सकते हैं वह चंडिका सम्पूर्ण संसारके पालन और अशुभ भयके नाश करनेमें अपनी बुद्धि करे ॥ ४ ॥ जो श्री पुण्यवान् लोगोंके घरमें लक्ष्मीरूप हो, पापीजनोंके घरमें अलक्ष्मीरूप हो, शुद्ध अन्तःकरणवालोंके

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्किं चातिवी-
र्यमसुरक्षयकारि भूरि। किं चाहवेषु चरितानि
तवाति यानि सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ ६ ॥
हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे हरि-
हरादिभिरप्यपारा। सर्वाश्रयाऽखिलमिदं जगदंश-
भूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७ ॥
यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन तृप्तिं प्रयाति
सकलेषु मखेषु देवि। स्वाहाऽसिवै पितृगणस्य
च तृप्तिहेतुरुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च॥८॥

हृदयमें बुद्धिरूप हो, श्रेष्ठ आचरणवालोंकी श्रद्धारूप हो और सत्यकुलमें उत्पन्न होनेवालोंकी लज्जारूप हो ऐसी तुमको हम नमस्कार करते हैं। हे देवि ! तुम संसारकी रक्षा करो॥५॥ हम तुम्हारे अचिंत्यरूपका किस प्रकार वर्णन करें और असुरोंका नाश करने वाले वीर्यका और देवता और असुरोंके संग्राममें तुम्हारे बड़े चरित्रको किस प्रकार वर्णन करें॥६॥ त्रिगुण होनेपर भी तुम समस्त जगत्की कारण हो और राग, द्वेष आदि दोषोंके कारण विष्णु शिव आदि भी तुम्हें नहीं जान सकते हैं, तुम्हारा पार किसीने नहीं पाया है, सबोंको आश्रय देनेवाली हो और यह सम्पूर्ण जगत् तुम्हारा अंशरूप है; तुम छः प्रकारके विकारोंसे रहित और परमप्रकृति और आदि-शक्ति हो ॥७॥ हे देवि ! संपूर्ण यज्ञोंमें तुम्हारे नामका उच्चा-

या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्वमभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः । मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषैर्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवी ॥ ९ ॥ शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् । देवि त्रयी भगवती भवभावनाय वार्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ॥ १० ॥

रण करनेसे देवता लोग तृप्त होते हैं क्योंकि स्वाहारूप तुम ही हो और पितृगणोंकी भी तृप्तिकी कारणरूप हो इसलिये लोग तुम्हें पितृकार्यमें स्वधा कहते हैं ॥८॥ हे देवि ! तुम मुक्तिकी कारण हो और तुमही अविचिंत्य ब्रह्मज्ञानरूपा हो अतएव रागद्वेषको छोड़ देने वाले और मोक्षकी इच्छा करनेवाले और इंद्रियोंको वश कर लेनेसे तत्त्वके जानने वाले ऐसे मुनि लोग तुम्हारा अभ्यास करते हैं इसलिये तुम भगवती हो और सर्वोत्तम मोक्षविद्या हो ॥९॥ तुम शब्दात्मिका अर्थात् वाणीरूप हो और दोषरहित ऋग्वेद और यजुर्वेदका और प्रवणयुक्त तथा सुन्दर पदोंके पाठवाले सामवेदोंकी आश्रयभूत हो; तुमही देवी हो, वेदत्रयी हो, तुमही भगवती हो, तुमही संसारकी रक्षाके लिये खेतीरूप हो और सम्पूर्ण जगत्की परम आपत्तिको दूर करनेवाली हो ॥ १० ॥

मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा दुर्गाऽसि
दुर्गभवसागरनौरसङ्गा। श्रीः कैटभारिहृदयैककृता-
धिवासा गौरीत्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ ११ ॥
ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्रबिम्बानुकारि कन-
कोत्तमकांतिकान्तम् ॥ अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा
तथापि वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण॥ १२ ॥
दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकरालमुद्यच्छशाङ्कस-
दृशच्छवि यन्न सद्यः। प्राणान्मुमोच महिषस्तद-
तीवचित्रं कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥१३॥

हे देवि ! तुम बुद्धिस्वरूप हो और संपूर्ण शास्त्रोंके सारको जानती हो, तुम दुर्गा हो, क्योंकि अति दुर्गम भवसागरकी नौका हो, अद्वैतस्वरूपिणी हो, तुम लक्ष्मी हो, कैटभ शत्रुके मारनेवाले विष्णु भगवान्‌के हृदयमें वास करनेवाली हो, गौरी हो और शिवजीने अपने वामभागमें प्रतिष्ठा की है ॥ ११ ॥ और मंद-मंद मुसकुराता हुआ निर्मल पूर्ण चन्द्रमाके समान, सुवर्णकी उत्तम कान्तिके समान कांतिमान् ऐसे तुम्हारे मुखको देखकर भी महिषासुरने क्रोधसे प्रहार किया यह बड़ा आश्चर्य है, सारांश यह है कि तुम्हारा मुख जगत्‌को मोहनेवाला है और उसे मोह नहीं हुआ अतएव वह बड़ा दुष्ट था ॥१२॥ हे देवि ! क्रोधसे युक्त और भृकुटियोंसे भंयकर और उदय होते हुए पूर्णिमाके चन्द्रके समान तुम्हारे मुखको

देवि प्रसीद परमा भवती भवाय सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि। विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥ १४ ॥ ते संमता जनपदेषु धनानि तेषां तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः। धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा येषां सदाऽभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥ धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति। स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादाल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन॥१६॥

देखकर शीघ्रही महिषासुरने प्राण नहीं छोड़े यह अत्यन्त ही आश्चर्य है क्योंकि कुपित यमराजके दर्शनसे कौन जीता है ॥१३॥ हे देवि ! तुम प्रसन्न होओ, तुम महालक्ष्मी हो और संसारके लिये उत्पन्न होती हो और जब कोप करती हो तो शीघ्रही कुलोंका नाश कर देती हो,सो यह बात अब ज्ञात होगई क्योंकि महिषासुरकी जो इतनी बड़ी सेना थी उसका नाश कर डाला ॥१४॥ वेही मनुष्य देशोंमें प्रतिष्ठा पाते हैं और उनहीको धन और यश प्राप्त होता है, उनहीका धर्म नहीं घटता है और वेही धन्य हैं और उन्हींके अधिक पुत्र सेवक और स्त्रियाँ होती हैं जिनपर सर्वदा तुम कल्याणकारिणी प्रसन्न होती हो ॥१५॥ और हे देवि ! तुम्हारे ही प्रसादसे पुण्यशील मनुष्य सर्वदा आदरपूर्वक धर्मके सम्पूर्ण

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि। दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥ १७ ॥ एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम्। संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि ॥ १८ ॥ दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम्। लोकान्प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता इत्थं मतिर्भवति तेष्वहितेषु साध्वी ॥ १९ ॥

कार्य करता है और फिर स्वर्गको जाता है इसलिये हे देवि! तीनों लोकोंमें फलको देनेवाली निःसंदेह तुम ही हो ॥१६॥ हे दुर्गे! स्मरण करनेसे संपूर्ण जीवोंके भयको दूर करती हो और जो स्थिरचित्त होकर स्मरण करते हैं उनको अत्यन्त श्रेष्ठ बुद्धि देती हो। दारिद्र्य दुःख भय हरनेवाली! तुम्हारे अतिरिक्त सब पर उपकार करनेवाली कृपालुचित्त और कौन है ॥ १७ ॥ इन असुरोंके मारे जानेसे संसारको सुख मिले और फिर वे नरकके लिये बहुत कालतक पाप करें और संग्राममें मृत्यु पाकर स्वर्गको जायँ यह सोचकर हे देवि! तुम शत्रुओंको मारती हो ॥१८॥ और तुम देखकर ही सब असुरोंको क्या भस्म नहीं कर सकती अर्थात् कर सकती हो परन्तु शत्रु-

खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् । यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्डयोग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥२०॥ दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः । वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥ २१ ॥ केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र । चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥ २२ ॥

ओंपर जो शस्त्र प्रहार करती हो सो इसलिये कि वे शत्रु भी शस्त्रसे पवित्र होकर स्वर्गादि लोकोंको जायँ इस प्रकार शत्रुओंमें भी जो तुम्हारी बुद्धि है सो श्रेष्ठ है ॥ १९ ॥ और हे देवि ! यही कारण है कि किरणोंसे शोभायमान और चन्द्रखण्डके समान तुम्हारे मुखके देखते हुए उन असुरोंकी दृष्टिखड्गके उग्र प्रभासमूहोंके निकलनेसे और त्रिशूलोंके अग्रभागकी कांतिके समूहोंसे नष्ट नहीं हुई ॥ २० ॥ हे देवि ! तुम्हारा स्वभाव और रूप दुष्ट लोगोंके दुराचारको नष्ट करनेवाला है और दूसरे उसकी चिंतना नहीं कर सकते, क्योंकि अतुल है और तुम्हारा बल दैत्योंको मारनेवाला है । इस प्रकार तुमने शत्रुओंपर भी दया प्रगट की है ॥ २१ ॥ हे देवि ! तुम्हारे इस पराक्रम, और शत्रुओंको भयभीत करनेवाले

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन त्रातं त्वया समर-
मूर्धनि तेऽपि हत्वा। नीता दिवं रिपुगणा भय-
मप्यपास्तमस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥२३॥
शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च॥२४॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ २५ ॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्माँस्तथा भुवम्॥२६॥

इस सुंदर स्वरूपकी कहो किसके साथ तुलना हो सकती है? आपके चित्तमें कृपा और संग्राममें कठोरता देख ली, तीनों लोकमें तुम ही वर देनेवाली हो ॥ २२ ॥ आपने शत्रुओंको नष्ट करके संपूर्ण लोकोंको बचा लिया और इन शत्रुओंको भी मारकर स्वर्गको पहुँचा दिया। मदोद्धत असुरोंसे उत्पन्न हुए हमारे भयको भी दूर किया आपको नमस्कार है ॥२३॥ हे देवि ! त्रिशूलसे हमारी रक्षा करो, हे अम्बिके ! खड्गसे हमारी रक्षा करो, घंटाके शब्दसे और धनुषकी प्रत्यंचाकी टंकारसे रक्षा करो ॥ २४ ॥ और हे चण्डिके ! पूर्व, पश्चिम; और दक्षिण तथा उत्तरमें अपना त्रिशूल घुमाकर हे ईश्वरि ! रक्षा करो ॥ २५ ॥ त्रिलोकीमें जितने तुम्हारे सौम्य और अत्यन्त घोर रूप विचरते हैं

खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ २७ ॥

ऋषिरुवाच ॥ २८ ॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।
अर्चिता जगतां धात्री तत्र गन्धानुलेपनैः ॥ २९ ॥
भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैः सुधूपिता ।
प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान्प्रणतान्सुरान् ॥ ३० ॥

देव्युवाच ॥ ३१ ॥

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम् ॥ ३२ ॥

देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किंचिदवशिष्यते ।
यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ॥ ३४ ॥

उन्हींसे हमारी और पृथ्वीकी रक्षा करो ॥२६॥ हे अम्बिके ! तुम्हारे करपल्लवमें जो खड्ग, शूल, गदा आदि शस्त्र-अस्त्र हैं उनसे चारों ओर हमारी रक्षा करो ॥ २७ ॥ ऋषि कहने लगे ॥ २८ ॥ कि वह जगन्माता इस प्रकार देवताओंसे स्तुति की गई और नन्दनवनमें उत्पन्न हुए दिव्य पुष्पों और गन्धके लगानेसे पूजित ॥२९॥ और सम्पूर्ण देवताओंसे भक्तिपूर्वक धूप देने से प्रसन्नमुखी होकर नम्र हुए सम्पूर्ण देवताओंसे बोली ॥३०॥ देवी बोली ॥३१॥ कि हे देवताओ ! अपना मनोऽभीष्ट वर मांगो ॥३२॥ देवता बोले ॥३३॥ आपने सब किया और अब कुछ बाकी नहीं है जो आपने

यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि ।
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः॥३५॥
यश्चमर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ।
तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसंपदाम् ॥ ३६ ॥
वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाऽम्बिके ॥३७॥

ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथात्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥३९॥
इत्येतत्कथितं भूप संभूता सा यथा पुरा ।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥ ४० ॥

हमारे शत्रु महिषासुरको मारा ॥३४॥ और हे महेश्वरि ! अब भी तुमको हमें वर देना है तो जब जब हम तुम्हारा स्मरण करें तब तब तुम हमारी परम आपत्तियोंको दूर करो ॥३५॥ और हे निर्मलमुखवाली ! जो मनुष्य इन स्तवोंसे तुम्हारी स्तुति करे उसकी धनकी वृद्धि और ऐश्वर्य द्वारा धन, स्त्री आदि संपत्तिकी वृद्धि करना और हे अम्बिके! हमारे ऊपर सर्वदा प्रसन्न रहना ॥३६॥३७॥ ऋषि बोले ॥ ३८ ॥ हे राजन् ! देवताओंसे जगत्के लिये और अपने लिये प्रसन्न की हुई भद्रकाली "ऐसा ही होगा" यह कहकर अन्तर्धान हो गई ॥ ३९ ॥ हे राजन् ! देवताओंके शरीरसे त्रिलोकीके हितकी इच्छा करनेवाली देवी जिस प्रकार पूर्वकालमें उत्पन्न हुई थी, वह

पुनश्च गौरीदेहात्सा समुद्भूता यथाऽभवत् ।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुंभनिशुम्भयोः ॥४१॥
रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ।
तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्कथयामि ते ॥४२॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

उवाच ॥ ५ ॥ अर्धानि ॥ २ ॥ श्लोकाः ॥ ३५ ॥ एवं ॥ ४२ ॥ आदितः ॥ २५९ ॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः

अस्य श्रीउत्तमचरित्रस्य रुद्र ऋषिः ॥ महासरस्वती देवता ॥ अनुष्टुपू छन्दः ॥ भीमा शक्तिः ॥ भ्रामरी बीजम् ॥ सूर्यस्तत्त्वम् । सामवेदो मूर्तिः ॥

सब कह दिया ॥४०॥ और फिर पार्वतीके देहसे दुष्ट दैत्यों तथा शुंभ निशुंभके मारनेके लिये और लोकोंकी रक्षाके लिये देवताओंके उपकार करनेवाली जैसे उत्पन्न हुई सो मुझसे कहा हुआ सुनो मैं यथावत् कहता हूं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके चतुर्थ अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ।

उत्तम चरित्रके रुद्र ऋषि हैं, महासरस्वती देवता हैं, अनुष्टुप् छन्द है, भीमा शक्ति है, भ्रामरी बीज है, सूर्य तत्त्व है;

महासरस्वतीप्रीत्यर्थम् उत्तमचरित्रपाठे विनियोगः ॥ घण्टाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकान् हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् । गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥ ३ ॥

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

पुरा शुंभनिशुंभाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः ।
त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात् ॥ २ ॥
तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम् ।
कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥ ३ ॥

सामवेद मूर्ति है और महासरस्वतीके प्रीत्यर्थ इस चरित्रका विनियोग है (जल छोड़ना) और महासरस्वतीका ध्यान पढ़कर चित्तमें ऐसा स्मरण करना कि, घंटा, शूल, हल, शंख, मुशल, चक्र, धनुष, बाण इनको अपने करकमलोंमें धारण किये, मेघोंके मध्यमें चमकते हुए चन्द्रमाके समान कांतिवाली गौरीके देहसे उत्पन्न त्रिलोकीकी आधार भूत, शुंभादि दैत्योंको मारनेवाली ऐसी महासरस्वतीको भजता हूं ॥ ३ ॥

ऋषि कहने लगे ॥१॥ पूर्वकालमें शुंभ और निशुम्भ नामक दो असुरोंने अपने घमण्डके बलका आश्रय पाकर इंद्रका त्रैलोक्यका राज्य और यज्ञोंका भाग छीन लिया ॥ २ ॥ वे दोनों ही सूर्य तथा चन्द्रमाके अधिकारको और कुबेर, यम-

तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च
ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ॥४॥
हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः ।
महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥५॥
तयास्माकं वरो दत्तो यथापत्सु स्मृताखिलाः ।
भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात्परमापदः ॥ ६ ॥
इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् ।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ॥७॥

देवा ऊचुः ॥ ८ ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्मताम् ॥९॥

राज और वरुणके अधिकारको करने लगे ॥३॥ और वे ही दोनों पवन और अग्निका काम करने लगे और जब पराजित राज्यसे भ्रष्ट ऐसे देवता निकाल दिये गये ॥४॥ तब उन दोनों महाबली असुरोंसे तिरस्कृत किये गये, अधिकार रहित सब देवता उस अपराजिता देवीका यों स्मरण करने लगे कि ॥५॥ उस भगवतीने हमको ऐसा वर दिया था कि, आपत्तिमें जब तुम मेरा स्मरण करोगे तब मैं तुम्हारी संपूर्ण आपत्तियोंका उसी क्षण नाश कर दूंगी ॥ ६ ॥ ऐसी सम्मति करके देवता पर्वतोंके शिरोमणि हिमालय पर्वतपर गये और वहां विष्णुमाया देवीकी स्तुति करने लगे ॥७॥ देवता कहने लगे ॥ ८ ॥ देवी, महादेवी, शिवाको निरंतर नमस्कार है, प्रकृतिको, भद्राको

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥१०॥
कल्याण्यै प्रणतावृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥११॥
दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥१२॥
अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥१३॥
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै ॥ १४ ॥ नमस्तस्यै ॥ १५ ॥

नियममें स्थित होकर नमस्कार करते हैं ॥९॥ रौद्राको नमस्कार, नित्या, गौरी और धात्रीको नमस्कार, चंद्रिका चन्द्रमारूपाको और सुखस्वरूपिणीको निरन्तर नमस्कार है ॥१०॥ कल्याणीको, प्रणत पुरुषोंकी ऋद्धिरूपाको, सिद्धिरूपिणीको हम नमस्कार करते हैं। नैर्ऋतिको नमस्कार, राजाओंकी लक्ष्मी और शर्वाणीको नमस्कार ॥ ११ ॥ दुर्गाको, दुर्गसे पार करनेवालीको, साराको, सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा और धूम्रावतीको सर्वदा नमस्कार है ॥ १२ ॥ जो अतिसौम्य और अत्यन्त रौद्ररूप है उसको हम विनयपूर्वक नमस्कार करते हैं, संसारकी प्रतिष्ठा स्वरूपिणीको नमस्कार, कृति (कार्यरूपिणी) देवीको वारंवार नमस्कार है ॥ १३ ॥ जो देवी सब प्राणियोंमें विष्णुमाया नामसे कही जाती है उसको नमस्कार ॥ १४ ॥ उसको नमस्कार ॥ १५ ॥

नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ॥ नमस्तस्यै ॥ १७ ॥ नमस्तस्यै ॥ १८ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ २० ॥ नमस्तस्यै ॥ २१ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥२२॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥२३॥ नमस्तस्यै ॥ २४ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ २६ ॥ नमस्तस्यै ॥२७॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २८ ॥

उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ १६ ॥ जो देवी सब प्राणियोंमें चेतना नामसे कही जाती है उसको नमस्कार ॥१७॥ उसको नमस्कार ॥१८॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥१९॥ जो देवी सब प्राणियोंमें बुद्धिरूपसे विराजमान है उसको नमस्कार ॥ २० ॥ उसको नमस्कार ॥२१॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ २२ ॥ जो देवी सब प्राणियोंमें निद्रारूपसे विराजमान है उसको नमस्कार ॥२३॥ उसको नमस्कार ॥२४॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार, ॥२५॥ जो देवी सब प्राणियोंमें क्षुधारूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥२६॥ उसको नमस्कार ॥२७॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ २८ ॥

या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ २९ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३० ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ३१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥३२॥ नमस्तस्यै ॥ ३३ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ३४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ३५ ॥ नमस्तस्यै ॥३६॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ३७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ३८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३९ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४० ॥ या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिताः ॥ नमस्तस्यै ॥ ४१ ॥

जो देवी सब प्राणियोंमें छायारूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥२९॥ उसको नमस्कार ॥३०॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥३१॥ जो देवी सब प्राणियोंमें शक्तिरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥३२॥ उसको नमस्कार ॥३३ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥३४॥ जो देवी सब प्राणियोंमें तृष्णारूपसे स्थित है उसको, नमस्कार॥३५॥ उसको नमस्कार, ॥३६॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥३७॥ जो देवी सब प्राणियोंमें शांतिरूपसे संस्थित है उसको नमस्कार॥३८॥ उसको नमस्कार॥३९॥उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥४०॥ जो देवी सब प्राणियोंमें जातिरूपसे विराजमान है -

नमस्तस्यै ॥४२॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४३ ॥
या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ॥ नम-
स्तस्यै ॥ ४४ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४५ ॥ नमस्तस्यै
नमो नमः ॥ ४६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरू-
पेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ४७ ॥ नमस्तस्यै
॥ ४८ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ४९ ॥ या
देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै
॥ ५० ॥ नमस्तस्यै ॥ ५१ ॥ नमस्तस्यै नमो
नमः ॥ ५२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण
संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ५३ ॥ नमस्तस्यै
॥ ५४ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ५५ ॥

उसको नमस्कार ॥४१॥ उसको नमस्कार ॥ ४२ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥४३॥ जो देवी सब प्राणियोंमें लज्जारूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥ ४४ ॥ उसको नमस्कार ॥४५॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार॥४६॥ जो देवी सब प्राणियोंमें शांतिरूपसे संस्थित है उसको नमस्कार ॥४७॥ उसको नमस्कार ॥ ४८ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ ४९ ॥ जो देवी सब प्राणियोंमें श्रद्धारूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥५०॥ उसको नमस्कार ॥५१॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार॥५२॥ जो देवी सब प्राणियोंमें कांतिरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥ ५३ ॥ उसको नमस्कार ॥ ५४ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नम-

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता नमस्तस्यै ॥ ५६ ॥ नमस्तस्यै ॥ ५७ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ५८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥५९॥ नमस्तस्यै ॥६०॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ६२ ॥ नमस्तस्यै ॥६३॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ६५ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६६ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६७ ॥

स्कार ॥५५॥ जो देवी सब प्राणियोंमें लक्ष्मीरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥५६॥ उसको नमस्कार ॥ ५७ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥५८॥ जो देवी सब प्राणियोंमें वृत्तिरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥ ५९ ॥ उसको नमस्कार ॥ ६० ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥६१॥ जो देवी सब प्राणियोंमें स्मृतिरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥ ६२ ॥ उसको नमस्कार ॥ ६३ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥६४॥ जो देवी सब प्राणियोंमें दयारूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥६५॥ उसको नमस्कार ॥ ६६ ॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ ६७ ॥

या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ६८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६९ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ७० ॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ७१ ॥ नमस्तस्यै ॥७२॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ७३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै ॥ ७४ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७५ ॥ नमस्तस्यै नमो नमः ॥७६॥ इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ॥ भूतेषु सततं तस्यै व्याप्त्यै देव्यै नमो नमः ॥ ७७ ॥ चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत् ॥ नमस्तस्यै ॥७८॥ नमस्तस्यै ॥ ७९ ॥

जो देवी सब भूतोंमें तुष्टिरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥ ६८ ॥ उसको नमस्कार ॥ ६९ ॥ उसको नमस्कार नमस्कार, नमस्कार ॥ ७० ॥ जो सब भूतोंमें मातृरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥७१॥ उसको नमस्कार ॥७२॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ ७३ ॥ जो देवी सब प्राणियोंमें भ्रान्तिरूपसे स्थित है उसको नमस्कार ॥७४॥ उसको नमस्कार ॥७५॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार ॥ ७६ ॥ जो देवी संपूर्ण इंद्रियोंकी और सब प्राणियोंकी अधिष्ठात्री और संपूर्ण प्राणियोंमें निरंतर व्याप्त है उस देवीको नमस्कार, नमस्कार ॥ ७७ ॥ जो देवी चैतन्यरूपसे संपूर्ण

नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ८० ॥ स्तुता सुरैः पूर्व-
मभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्य-
भिहन्तु चापदः ॥८१॥ या सांप्रतं चोद्धतदैत्यता-
पितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते । या च स्मृता
तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमू-
र्तिभिः ॥ ८२ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ८३ ॥

एवं स्तवादियुक्तानां देवानां तत्र पार्वती ।
स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन ॥ ८४ ॥

जगत्‌में व्याप्त होकर स्थित है उसको नमस्कार ॥७८॥उसको नमस्कार ॥७९॥ उसको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार॥८०॥ पूर्वकालमें अपना अभीष्ट फल पानेके आश्रयसे देवताओंने जिसकी स्तुति की थी और देवताओंके स्वामी इंद्रने जिसकी बहुत दिनोंतक सेवा की थी, जो मंगलकी कारण है वह भगवती शुभ कल्याणोंको करे और आपत्तियोंको दूर करे ॥ ८१ ॥ और जिसको प्रचंड दैत्योंसे दुःखी हुए सब देवता नमस्कार करते हैं और जो भक्तिसे नम्रमूर्तिवालोंसे स्मरण किये जानेपर उसी क्षण हमारी संपूर्ण आपत्तियोंको नष्ट कर देती है ॥८२॥ ऋषि बोले ॥८३॥ हे राजपुत्र ! इस प्रकार स्तुति करते हुए देवताओंके सामने पार्वतीजी वहां गंगाजलमें स्नान

साऽब्रवीत्तान्सुरान्सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का ।
शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताब्रवीच्छिवा ॥ ८५ ॥
स्तोत्रं ममैतत्क्रियते शुम्भदैत्यनिराकृतैः ।
देवैः समेतैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥ ८६ ॥
शरीरकोशाद्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका ।
कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥ ८७ ॥
तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत्सापि पार्वती ।
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया ॥८८॥
ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम् ।
ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भनिशुम्भयोः॥८९॥

करनेके लिये आईं ॥ ८४ ॥ और सुंदर भ्रुकुटीवाली वह पार्वती उन देवताओंसे पूछने लगीं कि; तुम किसकी स्तुति करते हो ? इतना कहते ही पार्वतीजीके शरीरकोशसे शिवा उत्पन्न होकर यह बोली ॥८५॥ शुंभ दैत्यसे निकाले गये और निशुम्भसे लड़ाईमें हारे हुए सब देवता मिलकर मेरी ही स्तुति करते हैं॥८६॥पार्वतीके शरीरकोशसे निकलने के कारण ही अंबिका को सम्पूर्ण लोकोंमें कौशिकी कहते हैं ॥ ८७ ॥ जब कौशिकी शरीरसे निकल चुकी तब पार्वतीका शरीर कृष्णवर्ण हो गया और कालिकाके नामसे प्रसिद्ध होकर हिमाचलपर रहने लगी ॥८८॥ फिर परम सुन्दर रूप धारण करती हुई अंबिकाको शुंभ निशुंभके भृत्य चंड और मुंडने देखा॥८९॥

ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा ।
काप्यास्ते स्त्री महाराज भासयंती हिमाचलम् ॥ ९० ॥
नैव तादृक् क्वचिद्रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् ।
ज्ञायतां काप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ॥ ९१ ॥
स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा ।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र तां भवान्द्रष्टुमर्हति ॥ ९२ ॥
यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो ।
त्रैलोक्ये तु समस्तानि सांप्रतं भान्ति ते गृहे ॥ ९३ ॥
ऐरावतः समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात् ।
पारिजाततरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा हयः ॥ ९४ ॥

उन दोनोंने शुंभसे जाकर कहा कि, हे महाराज ! परम सुंदरी कोई स्त्री हिमाचलपर है ॥९०॥ हे असुरेश्वर । उसके रूपसे उत्तम रूप किसीने कहीं नहीं देखा, इस लिये जान लीजिये कि यह किसकी स्त्री है और उसको ग्रहण कीजिये ॥९१॥ वह सुन्दरांगी स्त्रियोंमें रत्नरूप है और अपनी कान्तिसे दिशाओंको उज्ज्वल करती हुई बैठी है इसलिये आपको चलकर देखना चाहिये ॥९२॥ हे महाराज ! जो रत्न, मणि, हाथी और घोड़े त्रिलोकमें हैं सो संपूर्ण इस समय आपके गृहमें शोभायमान हैं ॥ ९३ ॥ ऐरावत हाथी कि जो हाथियोंमें रत्नके समान है और पारिजात वृक्ष और उच्चैःश्रवा घोड़ा इन्द्रके यहांसे

विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति तेऽङ्गणे ।
रत्नभूतमिहानीतं यदासीद्वेधसोऽद्भुतम् ॥ ९५ ॥
निधिरेष महापद्मः समानीतो धनेश्वरात् ।
किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लानपङ्कजाम् ९६।
छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चनस्रावि तिष्ठति ।
तथायं स्यन्दनवरो यः पुरासीत्प्रजापतेः ॥ ९७ ॥
मृत्योरुत्क्रांतिदा नाम शक्तिरीश त्वयाहृता ।
पाशः सलिलराज्यस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ॥ ९८ ॥
निशुम्भस्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः ।
वह्निश्चापि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ॥९९॥

लाया गया है ॥ ९४ ॥ और विधाताका रत्नजड़ित अद्भुत और हंसयुक्त विमान भी आपके आंगनमें रखा है॥९५॥और यह महानिधि नामकी निधि कुबेरके यहांसे लाई गई है और यह किञ्जल्किनी नाम विना मुरझाये कमलोंकी माला आपको समुद्रने दी थी ॥ ९६ ॥ कांचनस्रा विनाम वरुणका छत्र भी आपके घरमें है और यह सुन्दर रथ भी आपके यहां है कि जो पहिले प्रजापतिका था ॥९७॥ हे ईश ! यमराजकी उत्क्रान्तिदानामकी शक्ति आपने छीन ली थी और आपके भाई निशुंभके यहां वरुणदेवताका पाश ॥ ९८ ॥ और समुद्रमें उत्पन्न हुए सम्पूण रत्न हैं और अग्निदेवताने तुम्हें ऐसे दो वस्त्र दिये हैं कि जो अग्निमें गेरनेसे नहीं

एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते।
स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते॥१००॥
ऋषिरुवाच ॥ १०१ ॥
निशम्येति वचः शुंभः स तदा चण्डमुण्डयोः।
प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ॥१०२॥
इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम।
यथा चाभ्येति संप्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु १०३
स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने।
सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा॥१०४॥
दूत उवाच ॥ १०५ ॥
देवि दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः।
दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्सकाशमिहागतः ॥१०६॥

जलते हैं ॥ ९९ ॥ इस प्रकार हे दैत्येन्द्र ! तुम्हारे यहां सब रत्न आ गये फिर यह कल्याण करनेवाली स्त्रीरूप रत्न क्यों नहीं लेते हो ॥ १०० ॥ ऋषि बोले ॥१०१॥ तब शुम्भने चण्डमुण्डकी इस बातको सुनकर सुग्रीव नामक महासुरको देवीके पास दूत बनाकर भेजा ॥ १०२ ॥ और उसको जो कुछ कहना था सब समझा दिया कि, तुम जाकर मेरी ओरसे यह कहना और जिस प्रकार वह प्रसन्नता पूर्वक यहां आ जाय वह तुम शीघ्र करना ॥१०३॥ फिर वह दूत वहां जाकर अति रमणीय पर्वतके स्थानमें कि जहां वह देवी बैठी थी उससे सुन्दर मीठी-मीठी वाणीसे बोला॥१०४॥ दूत कहने लगा॥१०५॥ हे

अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु ।
निर्जिताखिलदैत्यारिः स यदाह शृणुष्वतत् ॥१०७॥
मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः ।
यज्ञभागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ॥१०८॥
त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः ।
तथैव गजरत्नं च हृतं देवेन्द्रवाहनम् ॥ १०९ ॥
क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः ।
उच्चैःश्रवससंज्ञं तत्प्रणिपत्य समर्पितम् ॥११०॥
यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च ।
रत्नभूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ॥१११॥

देवि ! शुंभ नामक दैत्योंके राजा हैं और त्रिलोकीके ईश्वर हैं उन्होंने मुझे दूत बनाकर भेजा है और मैं यहां तुम्हारे पास आया हूं ॥१०६॥ जितने देवता हैं उनमें जिसकी आज्ञा नहीं टल सकती और जिसने संपूर्ण देवताओंको जीत लिया है उसने जो कुछ कहा है, वह सुनो ॥१०७॥ संपूर्ण त्रैलोक्य मेरा है, सब देवता मेरे वशमें हैं और यज्ञके संपूर्ण भागोंको मैं पृथक्-पृथक् लेता हूं ॥१०८॥ और त्रिलोकोमें जितने सुन्दर रत्न हैं सो सब मेरे वशमें हैं और संपूर्ण गजरत्न और इन्द्रका वाहन जो ऐरावत है सा भी मैंने ले लिया है ॥१०९॥ और समुद्रके मथनेसे निकला हुआ जो उच्चैश्रवा नामक अश्वरत्न है उसको भी देवताओंने नम्रतापूर्वक मुझे अर्पण कर दिया है ॥११०॥ और हे सुंदरि ! देवताओंमे, गन्धर्वोंमे और नागोंमें

स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि लोके मन्यामहे वयम् ।
सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम्॥११२॥
मां वा ममानुजं वाऽपि निशुम्भमुरुविक्रमम् ।
भज त्वं चञ्चलापांगि रत्नभूताऽसि वै यतः॥११३॥
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् ।
एतद्बुद्ध्या समालोच्य मत्परिग्रहतां व्रज॥११४॥

ऋषिरुवाच ॥ ११५ ॥

इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तःस्मिता जगौ ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ॥ ११६ ॥

देव्युवाच ॥ ११७ ॥

सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किंचित्त्वयोदितम् ।
त्रैलोक्याधिपतिः शुंभो निशुम्भश्चापि तादृशः ११८।

जो जो रत्न थे सो सब मेरे यहां हैं॥१११॥ और हे देवि ! संसारमें हम तुमको स्त्रियोंमें रत्न समझते हैं अतः तुम हमारे यहां चली आओ, क्योंकि रत्नोंके भोगनेवाले हमही हैं॥११२॥ और हे चञ्चलकटाक्षवाली ! मुझे वा मेरे बड़े पराक्रमी छोटे भाई निशुंभको भज, क्योंकि तू रत्नस्वरूपा है ॥ ११३॥ मेरे पास आनेमे तू परम ऐश्वर्यको पावेगी । इन सब बातोंको बुद्धिसे विचारकर मेरी स्त्रीरूप हो जा॥११४॥ ऋषि बोले ॥११५॥ इतना कहनेपर उस समय वह दुर्गा भगवती भद्रा देवी जो सम्पूर्ण जगत्का धारण करती है गम्भीर और अन्तः-करणमें हँसकर बोली ॥ ११६ ॥ देवी कहने लगी ॥ ११७॥ तैंने सत्य कहा, जो तैंने कहा उसमें कुछ भी

किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्क्रियते कथम् ।
श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञा या कृता पुरा॥ ११९॥
यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति ।
यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति॥ १२०॥
तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः ।
मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु॥ १२१॥

दूत उवाच ॥ १२२ ॥

अवलिप्ताऽसि मैवं त्वं देवि ब्रूहि ममाग्रतः ।
त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भनिशुम्भयोः १२३॥
अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि ।
तिष्ठंति संमुखे देवि किं पुनः स्त्री त्वमेकिका॥ १२४॥

मिथ्या नहीं है कि शुंभ त्रिलोकीका स्वामी है और निशुंभ भी वैसा ही है ॥११८॥ किंतु जो मैंने प्रण कर रखा है वह मिथ्या कैसे करूँ? मैंने अल्पबुद्धिके अनुसार जो पहिले प्रतिज्ञा की थी सो सुन॥११९॥ जो मुझे युद्धमें जीतेगा, जो मेरे अभिमान-को तोड़ेगा और जो संसारमें मेरे समान बली होगा वह मेरा भर्ता होगा ॥१२०॥ इसलिये शुम्भ या महासुर निशुम्भ कोई भी यहाँ आवे और मुझे जीतकर शीघ्र ही मेरे साथ विवाह कर ले इसमें विलंबका क्या काम है ॥१२१॥ दूत बोला ॥१२२॥ तुमको बड़ा अभिमान है । हे देवि! फिर कभी मेरे सामने ऐसा मत कहना, त्रिलोकीमें ऐसा कौन पुरुष है जो शुंभ और निशुम्भके सामने ठहरे ॥१२३॥ और हे देवि ! उनके अतिरिक्त और जो दैत्य हैं उनके सामने युद्धमें समस्त

इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे ।
शुंभादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम् १२५
सा त्वं गच्छ मयोक्तं ते पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः ।
केशाकर्षणनिर्धूतगौरवा मा गमिष्यसि ॥ १२६ ॥

देव्युवाच ॥ १२७ ॥

एवमेतद्बली शुम्भो निशुम्भश्चातिवीर्यवान् ।
किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥१२८॥
स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः ।
तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु यत् ॥१२९॥

इति श्रीमा० देवी० देवीदूतसंवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः॥५॥
उवाच १।अर्ध ६६।श्लोकाः ५४।एवं १२९। आदितः ३८८॥

देवता भी नहीं ठहरते हैं फिर तुम तो स्त्री हो ॥१२४॥ और जिन शुंभादिकोंके सामने युद्धमें इन्द्र आदि संपूर्ण देवता नहीं ठहरे उनके सामने तुम स्त्री कैसे जाओगी ॥१२५॥ इसलिये तुम मेरे कहनेसे शुंभ निशुभके पास चलो और नहीं तो तुम्हारा केश पकड़कर ले चलूँगा इसमें तुम्हारा सब सत्य नष्ट हो जायगा ॥१२६॥ देवी बोली ॥१२७॥यह सत्य है, शुंभ बली है और निशुंभ भी बड़ा पराक्रमी है किंतु क्या करूँ मैंने अपनी प्रतिज्ञा प्रथम विचार कर नहीं की॥१२८॥ सो तू जा और जो कुछ मैंने कहा है उसे आदरपूर्वक असुरेन्द्र शुंभसे कह दे फिर जो उसे अच्छा लगे सो करे ॥१२९॥
पं० रामेश्वरभट्टकृत पंचमोऽध्यायका हिन्दी-अनु० समाप्त ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः ।
समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात् ॥ २ ॥
तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः ।
सक्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम् ॥ ३ ॥
हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः ।
तामानय बलाद्दुष्टां केशाकर्षणविह्वलाम् ॥ ४ ॥
तत्परित्राणदः कश्चिद्यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः ।
स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ॥ ५ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ६ ॥

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः ।
वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ॥ ७ ॥

ऋषि बोले ॥१॥ वह दूत देवीकी ऐसी वाणी सुनकर और क्रोध से पूरित हो दैत्यराजसे आकर विस्तारपूर्वक कह दिया॥२॥ फिर उस दूतका यह वचन सुनकर क्रोधसे दैत्योंका अधिपति धूम्रलोचनसे बोला ॥ ३ ॥ हे धूम्रलोचन ! तू शीघ्र अपनी सेनाको साथ ले जा और केश खैंचनेसे विह्वल होती हुई उस दुष्टा स्त्रीको बलपूर्वक ले आ ॥ ४ ॥ और यदि कोई उसके बचानेके लिये उद्यत हो तो वह देवता हो, यक्ष हो अथवा गंधर्व हो उसको भी मारना ॥५॥ ऋषि बोले ॥६॥ तब उसकी आज्ञा पाकर वह धूम्रलोचन दैत्य साठ हजार सेना

स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचलसंस्थिताम् ।
जगादोच्चैःप्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः ॥८॥
न चेत्प्रीत्याऽद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति ।
ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षणविह्वलाम् ॥ ९ ॥

देव्युवाच ॥ १० ॥

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान्बलसंवृतः ।
बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ॥११॥

ऋषिरुवाच ॥ १२ ॥

इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तमसुरो धूम्रलोचनः ।
हुंकारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥१३॥
अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥१४॥

लेकर शीघ्र गया ॥ ७ ॥ और हिमाचलपर विराजमान उस देवीको देखकर वह ऊंचे स्वरसे बोला कि, तू शुंभ निशुंभके पास चल ॥८॥ जो तू आज प्रीतिपूर्वक मेरे स्वामीके पास न चलेगी तो मैं तुझे केश पकड़कर विह्वल करता हुआ अभी ले चलूंगा ॥९॥ देवी बोली ॥१०॥ दैत्येश्वरने तुझ बलवान्को सेनायुक्त करके भेजा है जो तू मुझे बलसे ले चलता है तो फिर मैं तेरा क्या करूं ॥ ११ ॥ ऋषि बोले ॥१२॥ देवीके इतना कहनेपर वह असुर धूम्रलोचन देवीकी ओर दौड़ा तब अंबिकाने उसे हुंकारसे ही भस्म कर दिया ॥१३॥ तब तो

ततो धुतसटः कोपात्कृत्वा नादं सुभैरवम् ।
पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥१५॥
कांश्चित्करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् ।
आक्रम्य चाधरेणान्यान्स जघान महासुरान् ॥१६॥
केषांचित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी ।
तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान्पृथक् ॥ १७ ॥
विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथा परे ।
पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुतकेसरः ॥ १८ ॥
क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना ।
तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना ॥ १९ ॥

असुरोंकी सेना बड़ी क्रुद्ध हुई और अम्बिकाने उसपर तीक्ष्ण बाण और शक्ति फरशा आदि अस्त्रोंकी वर्षा की ॥ १४ ॥ फिर देवीका वाहन सिंह केश हिलाता हुआ क्रोधसे भयंकर शब्द करके असुरोंकी सेनापर टूटा ॥१५॥ कितनोंको पञ्जके प्रहारसे, कितने ही दैत्योंको मुखसे और कितने ही बड़े-बड़े असुरोंको होंठसे पकड़कर मारने लगा ॥१६॥ सिंहने कितनोंहीकी तो नखोंसे छातियां फाड डालीं और कितनोंहीके शिर हथेलीके प्रहारसे अलग कर दिये ॥ १७ ॥ और कितने ही असुरोंके उसने बाहु और शिर काट डाले और अपने केश हिलाकर कितने ही असुरोंकी छातीसे लोहू पीने लगा ॥ १८ ॥ और अत्यन्त क्रोधित देवीके वाहन उस

श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम् ।
बलं च क्षयितं कृत्स्नं देवीकेसरिणा ततः ॥२०॥
चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भ प्रस्फुरिताधरः ।
आज्ञापयामास च तौ चण्डमुण्डौ महासुरौ ॥२१॥
हे चण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुभिः परिवारितौ ।
तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥२२॥
केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि ।
तदाऽशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥ २३ ॥
तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते ।
शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम्॥२४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
धूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

उवाच॥४॥श्लोकाः २०॥ एवं ॥२४॥ एवमादितः ॥४१२॥

महात्मा सिंहने क्षणभरमें सब सेना नष्ट कर दी ॥१९॥ फिर देवीने उस असुर धूम्रलोचनको मारा और देवीके सिंहने संपूर्ण सेना नष्ट कर डाली यह बात सुनकर॥२०॥ दैत्योंके स्वामी शुम्भने क्रोध किया और होठोंको फड़काकर चण्ड मुण्ड नामक बड़े असुरोंको आज्ञा दी कि ॥२१॥ हे चंड ! हे मुंड ! तुम दोनों बहुतसी सेनाको साथ लेकर वहां जाओ और उस स्त्रीके केश पकड़कर वा बांधकर शीघ्र ले आओ ॥ २२ ॥ और जो इसमें तुम्हें कुछ संशय हो तो संपूर्ण आयुध और सब असुरोंके द्वारा उसे संग्राममें मार डालना ॥२३॥ और उस

अथ सप्तमोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्डमुण्डपुरोगमाः ।
चतुरङ्गबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥ २ ॥
ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् ।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्र शृङ्गे महति काञ्चने ॥ ३ ॥
ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः ।
आकृष्टचापासिधरास्तथान्ये तत्समीपगाः ॥ ४ ॥
ततः कोपं चकारोच्चैरंबिका तानरीन्प्रति ।
कोपेन चास्या वदनं मषीवर्णमभूत्तदा ॥ ५ ॥

दुष्टाके ताड़ित होनेपर और सिंहके मरनेपर उस अम्बिकाको उसी दशामें बांधकर और लेकर शीघ्र आ जाओ ॥२४॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके छठे अध्यायका हिंदी-अनुवाद समाप्त हुआ ॥ २ ॥

ऋषि कहने लगे ॥ १ ॥ वे चंड-मुंड आदि दैत्य आज्ञा पाते ही चतुरंगिनी सेनाको साथ लिये और अपने आयुध लेकर गये ॥२॥ और उन्होंने जाकर देखा कि देवी हिमाचलके एक सुवर्णमय शिखरपर सिंहके ऊपर स्थित और मन्दमन्द मुसकुराती हुई बैठी है ॥३॥ वे असुर और उनके अन्य साथी देवीको इस प्रकार देखकर धनुष चढ़ाते हुए तलवारको लेकर उसके पकड़नेके लिये यत्न करने लगे ॥४॥ तब अम्बिकाने

भ्रुकुटीकुटिलात्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम् ।
काली करालवदना विनिष्क्रान्तासिपाशिनी ॥६॥
विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमालाविभूषणा ।
द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसाऽतिभैरवा ॥ ७ ॥
अतिविस्तारवदना जिह्वाललनभीषणा ।
निमग्ना रक्तनयना नादापूरितदिङ्मुखा ॥ ८ ॥
सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती महासुरान् ।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥ ९ ॥
पार्ष्णिग्राहाङ्कुशग्राहियोधघण्टासमन्वितान् ।
समादायैकहस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥ १० ॥

उन शत्रुओंपर बड़ा क्रोध किया और उस काल इस देवीका मुख क्रोधके कारण श्यामवर्ण हो गया ॥५॥ फिर भ्रकुटीके चढ़ानेसे ललाटसे शीघ्र एक भयंकर मुखवाली खड्ग और फांसीको धारण किये, विचित्र खट्वांगको लिये, मुंडोंकी मालासे शोभित, बाघम्बर पहिने; अत्यन्त भयानक, सूखे मांसवाली, मुखको खोले हुई, जिह्वाको लहलहाती, भयंकर, रूप, भीतरको घुसे हुए लाल-लाल नेत्रवाली और अपने घोर शब्दसे दिशाओंके मुखोंको पूरित करती हुई काली देवी प्रकट हुई ॥६॥ ॥ ७ ॥ ८ ॥ और वह बड़े वेगसे असुरोंकी सेनापर टूटी और बड़े-बड़े असुरोंपर प्रहार करती हुई दैत्यकी सम्पूर्ण सेनाको भक्षण करने लगी ॥ ९ ॥ और पार्श्वरक्षक अंकुश-

तथैव योधं तुरगैः रथं सारथिना सह ।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यतिभैरवम् ॥ ११ ॥
एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् ।
पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥ १२ ॥
तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथाऽसुरैः ।
मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥ १३ ॥
बलिनां तद्बलं सर्वमसुराणां महात्मनाम् ।
ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत्तदा ॥ १४ ॥
असिना निहताः केचित्केचित्खट्वाङ्गताडिताः ।
जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा ॥ १५ ॥

वाला, योधा तथा घंटा इनके सहितहो हाथियोंको एक ही हाथसे पकड़-पकड़ मुखमें फेंकने लगी ॥ १० ॥ और इसी प्रकार घोड़ोंके साथ योद्धाको और सारथीके साथ रथको मुखमें डालकर भयंकर रीतिसे दातोंसे चबाने लगी ॥ ११ ॥ एकके केश पकड़े दूसरे की ग्रीवा पकड़ी और तीसरेकी छातीको चरणसे दबाकर मसल डाला ॥ १२ ॥ और उन असुरोंने शस्त्र और महा-अस्त्र फेंके उन सबको क्रोधसे पकड़ लिये और दांतोंसे मसल भी डाले ॥ १३ ॥ बली और बड़े शरीरवाले असुरोंकी उस सम्पूर्ण सेनाको मसल डाला और बहुतोंको भक्षणकर लिया और बहुतोंको मार भगाया ॥ १४ ॥ कितने ही असुर तो तलवारसे मारे गये और कितने ही खट्वांगसे ताडित किये गये और

क्षणेन तद्बलं सर्वमसुराणां निपातितम् ।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम् ॥ १६॥
शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः ।
छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ॥१७॥
तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् ।
बभुर्यथाऽर्कबिम्बानि सुबहूनि घनोदरम् ॥ १८ ॥
ततो जहासाऽतिरुषा भीमं भैरवनादिनी ।
काली करालवक्त्रान्तर्दुर्दर्शदशनोज्ज्वला ॥ १९ ॥
उत्थाय च महासिंहं देवी चण्डमधावत ।
गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाऽच्छिनत् २०॥

कितने ही असुर दांतों द्वारा चींथे जानेसे मर गये ॥ १५ ॥ फिर असुरोंकी संपूर्ण सेनाको एक क्षणभरमें गिरी हुई देखकर चण्डासुर उस अत्यन्त भयंकर कालीके सामने दौड़ा ॥ १६ ॥ और उस महासुरने उस भीमाक्षी देवीको अति भयंकर बाणोंकी वृष्टिसे और मुंडासुरसे फेंके हुए हजारो चक्रोंसे छा दिया ॥ १७ ॥ वे अनेक चक्र कालीके मुखमें लगे हुए ऐसे शोभायमान दीखते थे जैसे बादलमें बहुतसे सूर्यमण्डल ॥ १८ ॥ फिर घोर नाद करती हुई वह काली बड़े भयंकर रूपसे हँसने लगी और अपने करालमुखके भीतरके बड़े लम्बे-लम्बे दांतोंसे उज्ज्वल वर्ण दीखने लगी ॥ १९ ॥ फिर देवी अपनी बड़ी

अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
तमप्यपातयद्भूमौ स खड्गाभिहतं रुषा ॥ २१ ॥
हतशेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ॥२२॥
शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च ।
प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ॥२३॥
मया तवात्रोपहृतौ चण्डमुण्डौ महापशू ।
युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि ॥२४॥

ऋषिरुवाच ॥ २५ ॥

तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्डमुण्डौ महासुरौ ।
उवाच कालीं कल्याणी ललितं चण्डिकावचः ॥२६॥

तलवारको लेकर हं शब्द करती हुई चंडासुरकी ओर दौड़ी और उसके केश पकड़कर खड्गसे शिर काट डाला ॥२०॥ फिर चण्डको गिरा देखकर मुंडासुर देवीकी ओर दौड़ा तब देवीने क्रोधसे उसे भी खड्गसे काट कर भूमिपर गेर दिया ॥२१॥ फिर मरनेसे बची हुई सेना चण्डको और बड़े पराक्रमी मुंडको मरा देख भयके मारे चारों दिशाओंमें भाग गई ॥२२ तब काली चण्डके शिरको और मुंडको चण्डिकाके पास ले जाकर बड़े अट्टहास करके बोली कि ॥ २३ ॥ चण्ड और मुण्ड इन दो पशुओंको इस युद्ध यज्ञ में मारकर तुम्हारी भेंट करती हूं । शुम्भ और निशुम्भको तुम आप ही मारना ॥२४॥ ऋषि बोले ॥ २५ ॥ उन महाअसुर चण्ड मुण्डको

यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता ।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि ॥ २७ ॥
इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
चण्डमुंडवधो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥
उवाच ॥२॥ श्लोकाः ॥२५॥ एवं ॥२७॥ एवमादितः॥४३९॥

अथ अष्टमोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥
चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते ।
बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥ २ ॥
ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भ प्रतापवान् ।
उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ॥ ३ ॥

लाये हुए देखकर कल्याणरूप चंडिका कालीसे मधुर वचन बोली कि ॥ २६ ॥ तुम चण्ड और मुण्डको मेरे पास लेकर आई हो इसलिये हे देवि ! तुम संसारमें चामुंडाके नामसे प्रसिद्ध होओगी ॥ २७ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके सप्तम
अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ।

ऋषि बोले ॥१॥ चंड और मुंडके मारे जानेपर और संपूर्ण सेनाके नाश होनेपर असुरोंके स्वामी ॥२॥ प्रतापवान् शुंभने अत्यंत क्रोधित होकर असुरोंको लड़नेकी आज्ञा दी ॥ ३ ॥

अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः ।
कम्बूनां चतुराशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः ॥ ४ ॥
कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै ।
शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥५॥
कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथाऽसुराः ।
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ॥६॥
इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः ।
निर्जगाम महासैन्यसहस्रैर्बहुभिर्वृतः ॥ ७ ॥
आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम् ।
ज्यास्वनैः पूरयामास धरणीगगनान्तरम् ॥ ८ ॥
ततः सिंहो महानादमतीव कृतवान्नृप ।
घण्टास्वनेन तन्नादानम्बिका चोपबृंहयत् ॥ ९ ॥

आज अपनी सब प्रकारकी सेनाओंको साथ लेकर ८६ उदायुध नामके दैत्य और कंबु नामके ८४ दैत्य जायँ॥४॥ कोटिवीर्य नाम असुरोंके पचास कुल और धूम्रसंज्ञक असुरोंके सौ कुल मेरी आज्ञासे युद्धके लिये जायँ ॥५॥ और कालक, दौर्हृद, मौर्य इन वंशोंमें उत्पन्न हुए मेरी आज्ञासे युद्धके लिये सजकर शीघ्र जायँ ॥६॥ यह आज्ञा देकर भयंकर शासनवाला वह असुरेश्वर शुंभ सहस्रों बड़ी-बड़ी सेनाओंको साथ लेकर निकला॥७॥ फिर चंडि-काने उस अति भयंकर सेनाको आती देखकर धनुषकी टंका-रसे पृथ्वी और आकाशको पूरित कर दिया॥८॥ और हे राजा! उस समय सिंहने अत्यन्त घोर शब्द किया, फिर अम्बिकाने

धनुर्ज्यासिंहघण्टानां नादापूरितदिङ्मुखा ।
निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारिताननाः ॥१०॥
तं निनादमुपश्रुत्य दैत्यसैन्यैश्चतुर्दिशम् ।
देवी सिंहस्तथा काली शरौघैः परिवारिताः ॥११॥
एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम् ।
भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विताः ॥ १२ ॥
ब्रह्मेशगुहविष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः ।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥१३॥
यस्य देवस्य यद्रूपं यथा भूषणवाहनम् ।
तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान्योद्धुमाययौ ॥ १४ ॥

उन शब्दोंको अपने घंटेके शब्दसे और अधिक बढ़ाया ॥९॥ धनुषकी टंकारसे और सिंह और घंटेके नादसे दिशाओंके मुख भर गये और कालीने अपने मुखको चौड़ा कर बड़े भयंकर नादसे जय जय शब्द किया ॥१०॥ उस शब्दको सुनकर दैत्योंकी सेनाने क्रोधसे चारों दिशाओंमें देवीको तथा सिंह और कालीको शरोंसे घेर लिया ॥ ११ ॥ और हे राजन् ! इसी अवसरमें असुरोंके मारनेके लिये और देवताओंके कल्याणके लिये अत्यंत वीर्य और बलसे युक्त ॥ १२ ॥ ब्रह्मा, शिव, स्वामिकार्तिक, विष्णु तथा इंद्र इनकी शक्तियां इनके शरीरसे निकलकर उन देवताओंके समानरूप धरकर चंडिकाके पास गईं ॥१३॥ जिस देवताका जैसा स्वरूप है और जैसे भूषण और वाहन हैं उनकी शक्ति भी वैसे ही स्वरूप भूषण तथा

हंसयुक्तविमानाग्रे साक्षसूत्रकमण्डलुः ।
आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते ॥१५॥
माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूलवरधारिणी ।
महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखाविभूषणा ॥ १६ ॥
कौमारी शक्तिहस्ता च मयूरवरवाहना ।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी ॥१७॥
तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता ।
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गखड्गहस्ताभ्युपाययौ ॥ १८ ॥
यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रती हरेः ।
शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम्॥१९॥

वाहनके साथ असुरोंसे लड़नेको आई ॥ १४ ॥ हंसयुक्त विमानपर बैठ हाथमें अक्षमाला और कमंडलु लिये ब्रह्माकी शक्ति आई, जो कि ब्रह्माणीके नामसे प्रसिद्ध हुई ॥१५॥ और बैलपर चढ़कर त्रिशूल और वरको धारण किये चन्द्र-रेखासे शोभित और सर्पोंके कंकण धारण किये शिवकी शक्ति माहेश्वरी आई ॥१६॥ स्वामिकार्तिकके स्वरूपवाली कौमारी शक्ति हाथमें लिये हुए सुन्दर मयूरपर चढ़कर दैत्योंसे युद्ध करनेको आई ॥ १७ ॥ और गरुड़के ऊपर स्थित शंख, चक्र, गदा, धनुष और खड्ग इनको हाथोंमें लिये विष्णुकी शक्ति (वैष्णवी) आई ॥१८॥ महावराहके अतुल रूपको धारण करनेवाली विष्णुकी शक्ति भी वराहरूप धारण करके आई ॥ १९ ॥

नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः ।
प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहतिः ॥ २० ॥
वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरि स्थिता ।
प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥ २१ ॥
ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः ।
हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याह चंडिकाम्॥२२॥
ततो देवीशरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा ।
चंडिका शक्तिरत्युग्रा शिवाशतनिनादिनी ॥२३॥
सा चाह धूम्रजटिलमीशानमपराजिता ।
दूतत्वं गच्छ भगवन्पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः ॥२४॥

नारसिंही नृसिंहके सदृश शरीरको धारण करके आई और उनके सटाके हिलनेसे नक्षत्रोंकी पंक्ति हिलने लगी ॥२०॥ इन्द्रकी शक्ति वज्रको हाथमें लिये सहस्र नेत्रोंसे शोभित इंद्रका यथार्थ रूप धारण किये गजराजके ऊपर स्थित हो आई ॥२१॥ फिर इन सब देवताओंकी शक्तियोंसे महादेवजीने चण्डिकासे कहा कि तुम मेरी इच्छासे शीघ्र इन असुरोंको मारो॥२२॥ इसके अनन्तर देवीके शरीरसे अत्यन्त भयंकर और अत्युग्र सौ शिवाओंके समान नाद करनेवाली चण्डिका शक्ति निकली ॥२३॥ और उस अपराजिता देवीने धूम्रवर्णकी जटाको धारण किये महादेवजीसे कहा–हे भगवन् ! आप शुंभ और निशुम्भके पास मेरी ओरसे दूत होकर जाओ ॥ २४ ॥ और अत्यन्त गर्वित होकर शुंभ निशुंभ दानवोंसे और अन्य

ब्रूहि शुम्भं निशुंभं च दानवावतिगर्वितौ ।
ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥ २५ ॥
त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः ।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥ २६ ॥
बलावलेपादथ चेद्भवन्तो युद्धकांक्षिणः ।
तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ॥२७॥
यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् ।
शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता॥२८
तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महासुराः ।
अमर्षापूरिता जग्मुर्यतः कात्यायनी स्थिता ॥२९॥
ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः ।
ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ॥ ३० ॥

जो दानव युद्धके लिये उपस्थित हैं उनसे कहो कि॥२५॥ यदि तुम लोग जीना चाहते हो तो इन्द्र त्रिलोकीका राज्य पावे और देवता यज्ञभागी हों और तुम सब पातालको चले जाओ ॥२६॥ और जो तुम अपने बलके अहंकारसे युद्धकी इच्छा रखते हो तो आओ तुम्हारे रक्तसे हमारी सब योगिनियां तृप्त हों ॥२७॥ उस देवीने शिवजीको स्वयं दूतकार्यपर नियुक्त किया इसलिये इस लोकमें वह शिवदूतीके नामसे प्रसिद्ध हुई ॥२८॥ फिर वे महाअसुर भी महादेवजीसे कही हुई देवीकी बात को सुनकर और क्रोधमें भरकर जहां कात्यायनी स्थित थी वहां गये ॥ २९ ॥ इसके बाद अत्यन्त क्रोधित वे प्रथम उस देवीके

सा च तान्प्रहितान्बाणाञ्छूलशक्तिपरश्वधान् ।
चिच्छेद लीलयाध्मातधनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ॥ ३१ ॥
तस्याग्रतस्तथा काली शूलपातविदारितान् ।
खट्वाङ्गपोथिताँश्चारीन्कुर्वती व्यचरत्तदा ॥ ३२ ॥
कमण्डलुजलाक्षेपहतवीर्यान्हतौजसः ।
ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून्येन येन स्म धावति ॥३३॥
माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी ।
दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्यातिकोपना॥३४॥
ऐन्द्री कुलिशपातेन शतशो दैत्यदानवाः ।
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ॥ ३५ ॥

आगे शर, शक्ति, बाण, ऋष्टि इनकी वर्षा करने लगे ॥३०॥ और जो कुछ बाण, शूल, चक्र और फरसे असुरोंने फेंके थे उनके धनुषको खैंचकर छोड़े हुए बड़े-बड़े बाणोंसे काटकर गिराये ॥३१॥ और उस देवीके आगे काली शत्रुओंको त्रिशूलसे चीरती और खट्वांगसे कुचलती हुई इधर फिरने लगी ॥ ३२ ॥ और ब्रह्माणी जिधर जिधर जाती थी उधर उधर शत्रुओंपर कमंडलुका जल छिड़क-छिड़ककर हतवीर्य और निर्बल करने लगी ॥३३॥ माहेश्वरीने त्रिशूलसे, वैष्णवीने चक्रसे और क्रोधित कौमारीने शक्तिसे दैत्योंको मारा ॥३४॥ और ऐन्द्रीने वज्रके प्रहारसे सैकड़ों दैत्य दानवोंको मारा कि जिससे वे रुधिरके प्रवा-

तुण्डप्रहारविध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः ।
वाराहमूर्त्या न्यपतँश्चक्रेण च विदारिताः ॥३६॥
नखैर्विदारितांश्चान्यान्भक्षयन्ती महासुरान् ।
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगंबरा ॥ ३७ ॥
चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदूषिताः ।
पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्चखादाथ सा तदा॥३८॥
इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् ।
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ॥ ३९ ॥
पलायनपरान्दृष्ट्वा दैत्यान्मातृगणार्दितान् ।
योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः ॥४०॥

होंके बरसाते हुए पृथ्वीपर लोट गये ॥ ३५॥ और वराह शक्तिके तुण्डके प्रहारसे विध्वस्त और दंष्ट्राके आगेके भागसे जिनके वक्षस्थल फट गये और चक्रसे छिदे हुए दैत्य गिरने लगे ॥ ३६॥ नारसिंही देवी नखोंसे फाड़े हुए अन्य बड़े-बड़े असुरोंको भक्षण करती हुई और अपने घोर नादसे दिशा और आकाशको पूरती हुई संग्राम में घूमने लगी ॥ ३७ ॥ शिवदूतीके भयंकर अट्टहाससे तिरस्कार किये गये असुर पृथ्वीपर गिरने लगे और फिर उन गिरे हुओंको चण्डिका भक्षण करने लगी ॥३८॥ इस प्रकार देवियोंके गणको क्रोधित और अनेक प्रकार से बड़े असुरोंको मसलते हुए देखकर दैत्योंकी सेना नष्ट होने लगी ॥ ३९ ॥ देवियोंके गणसे पीड़ित दैत्योंको भागता हुआ देखकर रक्तबीज नामक महासुर क्रोध

रक्तबिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः ।
समुत्पतति मेदिन्यास्तत्प्रमाणस्तदासुरः ॥ ४१ ॥
युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः ।
ततश्चैन्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत् ॥ ४२ ॥
कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् ।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः ॥४३॥
यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः ।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः ॥४४॥
ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसंभवाः ।
समं मातृभिरत्युग्रशस्त्रपातातिभीषणम् ॥ ४५ ॥

करके लड़नेके लिये आया ॥४०॥ इसके शरीरसे जब रक्तका बिन्दु पृथ्वीपर गिरता था तब उसीके समान असुर पृथ्वीसे उत्पन्न हो जाता था ॥४१॥ यह महा असुर गदाको हाथमें लेकर इंद्रकी शक्ति ऐंद्रीसे युद्ध करने लगा, फिर ऐन्द्रीने अपने वज्रसे रक्तबीजको ताडित किया ॥४२॥ उसके वज्रसे चोट लगनेपर उसके शरीरसे शीघ्र ही बहुतसा लोहू निकलने लगा कि जिससे उसीके रूपके समान और वैसे ही पराक्रमी योद्धा लोग उत्पन्न हो गये ॥ ४३ ॥ और उसके शरीरसे जितने रक्तबिंदु गिरते थे उतने ही पुरुष उसके बल वीर्य और पराक्रमवाले उत्पन्न होने लगे ॥ ४४ ॥ रक्तसे उत्पन्न हुए वे पुरुष भी वहां देवियोंके साथ अति उग्र शस्त्रोंको बरसाते

पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा ।
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः ॥ ४६ ॥
वैष्णवी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह ।
गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥ ४७ ॥
वैष्णवीचक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसंभवैः ।
सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महासुरैः ॥ ४८ ॥
शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना ।
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्तबीजं महासुरम् ॥ ४९ ॥
स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत्पृथक् ।
मातॄः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥५०॥

हुए भयंकर रीतिसे युद्ध करने लगे ॥४५॥ और फिर जब वज्रके घातसे इसका शिर कट गया तब रक्त बहा और उससे सहस्रों पुरुष उत्पन्न हो गये ॥ ४६ ॥ वैष्णवीने इसे युद्धमें चक्रसे काटा और ऐन्द्रीने इस असुरेश्वरको गदासे ताडन किया ॥४७॥ वैष्णवीके चक्रसे कटे हुए असुरके रुधिरके बहनेसे उत्पन्न हुए उसीके समान सहस्रों बड़े बड़े असुरोंसे जगत व्याप्त हो गया ॥ ४८ ॥ कौमारीने शक्तिसे और वाराहीने तलवारसे तथा माहेश्वरीने त्रिशूलसे उस महाअसुर रक्तबीजको मारा ॥४९॥ फिर उस महा असुर रक्तबीजने भी क्रोधमें भरकर सब देवियोंको अलग अलग मारा ॥ ५० ॥

तस्याहतस्य बहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि ।
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥५१॥
तैश्चासुरासृक्संभूतैरसुरैः सकलं जगत् ।
व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ॥ ५२ ॥
तान्विषण्णान्सुरान्दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा ।
उवाच काली चामुण्डे विस्तीर्णं वदनं कुरु ॥५३॥
मच्छस्त्रपातसंभूतान् रक्तबिन्दून्महासुरान् ।
रक्तबिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना ॥५४॥
भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान्महासुरान् ।
एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति ॥ ५५ ॥

शक्ति शूल आदि अनेक शस्त्रोंसे मरे हुए असुरके लोहूकी जो धारा पृथ्वीपर बही उससे सैकड़ों असुर उत्पन्न हो गये ॥ ५१ ॥ और उस असुरके रुधिरसे उत्पन्न हुए असुरोंसे सम्पूर्ण जगत् व्याप्त हो गया और इससे देवताओंको बड़ा भय उत्पन्न हुआ ॥ ५२ ॥ फिर उन डरे हुए देवताओंको देखकर चण्डिका कालीसे शीघ्र बोली कि, हे चामुंडे ! अपने मुखको विस्तृत करलो ॥ ५३ ॥ और मेरे शस्त्रके घातसे उत्पन्न हुए रक्तबिंदुओंको और रक्तबिंदुओंसे उत्पन्न हुए असुरोंको तुम इस मुखसे शीघ्र ग्रहण करो ॥५४॥और उससे उत्पन्न हुए महाअसुरोंको भक्षण करती हुई रणमें विचरती रहो इस प्रकार जब इस दैत्यका रुधिर क्षीण हो जायगा तब

भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे ।
इत्युक्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभिजघानतम् ॥५६॥
मुखेन काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम् ।
ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चंडिकाम् ॥५७॥
न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि ।
तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् ॥ ५८ ॥
यतस्ततस्तद्वक्त्रेण चामुण्डा संप्रतीच्छति ।
मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महासुराः ॥५९॥
तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् ।
देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ॥ ६० ॥

यह नष्ट हो जायगा ॥५५॥ तुम बड़ी उग्र हो, तुम्हारे खाते रहनेसे और असुर उत्पन्न नहीं होंगे, देवीने उससे ऐसा कहकर उस रक्तबीजको त्रिशूलसे घायल किया ॥५६॥ और कालीने रक्तबीजके रुधिरको अपने मुखमें लिया फिर वह दैत्य उस युद्धमें गदासे चंडिकाको ताडित करने लगा ॥५७॥ फिर उस गदाघातसे देवीके शरीरमें कुछ भी पीड़ा नहीं हुई और उस घायल असुरके देहसे बहुतसा रुधिर बहने लगा ॥५८॥ चामुंडाने उस रुधिरको चारों ओरसे पीनेकी इच्छाकी और इसके मुखमें लोहूके गिरनेसे उत्पन्न हुए जो दैत्य ॥५९॥ उनको इस चामुं-डाने भक्षण किये और उस रक्तबीजका रुधिर पी लिया और

जघान रक्तबीजं तं चामुण्डा पीतशोणितम् ।
स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसंघसमाहतः ॥ ६१ ॥
नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः ।
ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ॥ ६२ ॥
तेषां मातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः ॥६३॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
रक्तबीजवधो नामाष्टमोऽध्याय ॥ ८ ॥

उवाच १ । अर्धानि ॥१॥ श्लोकाः ॥६१॥ आदितः ॥५०२॥

देवीने शूल, वज्र, बाण, तलवार और ऋष्टि इनसे ॥ ६० ॥ उस रक्तबीजको कि जिसका चामुंडाने रक्त पी लिया था मार डाला और वह शस्त्रोंके समूहसे मारा हुआ पृथ्वीतलपर गिर पड़ा ॥ ६१ ॥ और हे राजन् ! तब रक्तबीज महासुर रुधिर रहित हो गया तब हे नृप ! देवता बड़े प्रसन्न हुए ॥ ६२ ॥ और उनसे उत्पन्न हुआ देवियोंका गण रुधिर पीपीकर उद्धत हो नृत्य करने लगा ॥ ६३ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके
अष्टम अध्यायका हिंदी-अनुवाद समाप्त हुआ ।

अथ नवमोऽध्यायः

राजोवाच ॥ १ ॥

विचित्रमिदमाख्यातं भगवन्भवता मम ।
देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम् ॥ २ ॥
भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते ।
चकार शुंभो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः ॥३॥

ऋषिरुवाच ॥ ४ ॥

चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते ।
शुम्भासुरो निशुंभश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥ ५ ॥
हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् ।
अभ्यधावन्निशुंभोऽथ मुख्ययाऽसुरसेनया ॥ ६ ॥

राजा कहने लगा ॥ १ ॥हे भगवन् ! आपने मुझे रक्तबीजके वधकी विचित्र कथा और देवीका चरित्र और माहात्म्य सुनाया ॥ २ ॥ किन्तु मुझे इस बातको श्रवण करनेकी इच्छा है जब रक्तबीज मारा गया तब शुंभ और निशुंभने अत्यंन्त क्रोध कर क्या किया॥३॥ऋषि बोले॥४॥ कि जब रक्तबीज मारा गया और संग्राममें और भी असुर मारे गये तब शुम्भासुर और निशुम्भने अत्यंन्त कोप किया ॥ ५ ॥ और फिर निशुम्भ महासेनाको मरी हुई देखकर क्रोधित हुआ और असुरोंकी मुख्य सेनाको साथ लेकर दौड़ा ॥६॥

तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महासुराः ।
संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥ ७ ॥
आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः ।
निहन्तुं चण्डिकां कोपात्कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥८॥
ततो युद्धमतीवासीद्देव्याः शुम्भनिशुम्भयोः ।
शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतो ॥ ९ ॥
चिच्छेदास्तांञ्छरांस्ताभ्यां चंडिका स्वशरोत्करैः ।
ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ ॥ १० ॥
निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् ।
अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ॥ ११ ॥

और इस दैत्यके आगे तथा पीछे और दोनों ओर बड़े-बड़े असुर अपने होठोंको चबाते हुए क्रोध करके देवीको मारनेके लिये आये ॥ ७ ॥ और बड़ा पराक्रमी शुंभ भी क्रोधसे अपनी सेनाको साथ लिये चण्डिकाके मारनेको और देवियोंसे युद्ध करनेके लिये आया ॥ ८ ॥ फिर तो शुंभ और निशुम्भका देवीके साथ बड़ा घोर युद्ध होने लगा और जल बरसानेवाले मेघोंके समान अत्यन्त उग्र बाणोंकी वर्षा होने लगी ॥९॥ चंडिकाने अपने बाण समूहोंसे उन दोनों द्वारा फेंके गए बाणोंको काट डाला और उन दोनोंके अंगोंको शस्त्रोंके समूहोंसे ताड़न करने लगी ॥१०॥ फिर निशुम्भने पैनी तलवार और चमकती हुई ढाल लेकर देवीके उत्तम वाहन सिंहके शिरमें

ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम्॥ १२॥
छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः ।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभिमुखागताम्॥ १३॥
कोपाध्मातो निशुंभोऽथ शूलं जग्राह दानवः ।
आयान्तं मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ॥१४॥
आविद्ध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चंडिकां प्रति ।
सापि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता॥ १५॥
ततः परशुहस्तं तमायान्तं दैत्यपुङ्गवम् ।
आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भूतले ॥ १६ ॥
तस्मिन्निपतिते भूमौ निशुंभे भीमविक्रमे ।
भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥१७॥

मारा ॥११॥ फिर वाहनके ताडित होनेपर देवीने क्षुरप्र नामक शस्त्रसे निशुंभकी उत्तम तलवारको और अष्टचन्द्रक नाम ढालको शीघ्र काट डाला ॥१२॥ फिर ढाल-तलवार कट जानेपर उस असुरने शक्ति फेंकी तब सामने आई उस शक्तिके भी देवीने चक्रसे दो खंड कर दिये ॥१३॥ फिर क्रोध करके शुंभासुरने शूल लिया, देवीने मुष्टिपातसे उसे भी चूर्णकर डाला॥१४॥ फिर उसने भी गदा घुमाकर देवीकी ओर फेंकी और वह भी देवीके त्रिशूलसे टूटकर भस्म होगई ॥ १५ ॥ फिर फरसा हाथमें लेकर आते हुए उस दैत्येश्वरको देवीजीने बाणोंके समूहोंसे घायल करके पृथ्वीपर गिरा दिया ॥ १६ ॥ फिर भयंकर

स रथस्थस्तथाऽत्युच्चैर्गृहीतपरमायुधैः ।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः ॥ १८ ॥
तमायान्तं समालोक्य देवी शङ्खमवादयत् ।
ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव दुःसहम् ॥ १९ ॥
पूरयामास ककुभो निजघण्टास्वनेन च ।
समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधायिना ॥ २० ॥
ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभमहामदैः ।
पूरयामास गगनं गां तथैव दिशो दश ॥ २१ ॥
ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत् ।
कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः ॥२२॥

पराक्रमवाले निशुंभके गिरनेपर उसका भाई शुम्भ अत्यन्त कोप करके अम्बिकाके मारनेके लिये गया ॥ १७ ॥ और बड़े-बड़े आयुध लेकर अत्यंत लम्बी अतुल पराक्रमवाली आठ भुजाओंके साथ वह रथमें बैठनेपर संपूर्ण मेघमण्डलमें व्याप्त होकर दीखने लगा ॥१८॥ फिर देवीने उसे आया हुआ देखकर शंख बजाया और अत्यंत दुःसह धनुषकी प्रत्यंचाका टंकार शब्द किया ॥ १९ ॥ सम्पूर्ण दैत्योंकी सेनाओंके तेजको हरनेवाले घंटेके शब्दसे दिशाओंको भरदिया ॥२०॥ फिर सिंहने बड़े-बड़े हाथियोंके महामदको दूर करनेवाले अपने घोर नादोंसे पृथ्वी, आकाश और दशों दिशाओंको पूरित कर दिया ॥२१॥ फिर कालीने आकाशमें उछलकर (और फिर उतरकर) दोनों हाथ पृथ्वीपर पटक दिया,

अट्टाट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह ।
तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भ कोपं परं ययौ ॥२३॥
दुरात्मँस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा ।
तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाशसंस्थितैः ॥ २४ ॥
शुंभेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा ।
आयान्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया२५॥
सिंहनादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम् ।
निर्घातनिःस्वनो घोरो जितवानवनीपते ॥ २६ ॥
शुम्भमुक्ताञ्छरान् देवी शुंभस्तत्प्रहिताञ्छरान् ।
चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥२७॥

जिसके नादसे पहिले जितने शब्द थे सब ढक गये ॥२२॥ फिर शिवदूतीने बडा घोर अट्टाट्टहास किया और उन शब्दोंसे असुर भयभीत हुए और शुंभको बड़ा क्रोध हुआ ॥२३॥ फिर जब अम्बिकाने उससे यह कहा कि "रे दुष्ट ! तू ठहर जा" तब आकाशमें स्थित देवताओंने जय-जय शब्द किया॥२४॥ फिर शुंभने आकर ज्वालासी अत्यंत भयंकर जो शक्ति छोड़ी देवीने अग्निके पर्वतके समान तेजवती आती हुई उस शक्तिको महोल्का नामक अपनी शक्तिसे काट दिया।२५। फिर शुंभके सिंहके समान नादसे तीनों लोक व्याप्त हो गये तब हे राजन् ! आकाशसे उत्पन्न हुए निर्घातके घोर शब्दने इस शुंभके नादको जीत लिया ॥२६॥ फिर देवीने शुंभके छोड़े हुए बाणोंको और शुंभने देवीके फेंके हुए बाणोंको परस्पर

ततः सा चंडिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघानतम् ।
स तदाभिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह ॥२८॥
ततो निशुंभः संप्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः ।
आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥ २९ ॥
पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः ।
चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चंडिकाम् ॥३०॥
ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी ।
चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्चतान्॥३१॥
ततो निशुंभो वेगेन गदामादाय चंडिकाम् ।
अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः ॥ ३२ ॥
तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चंडिका ।
खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ॥ ३३ ॥

अपने-अपने सैकड़ों हजारों बाणोंसे काट डाला ।।२७।। तब उस चण्डिकाने क्रोधकर उस शुंभको त्रिशूलसे मारा और उस समय वह घायल हो मूर्च्छा खाकर पृथ्वीपर गिर पड़ा॥२८॥ फिर निशुंभ सचेत हो धनुषको ग्रहण करके आया और उसने कालीदेवी तथा सिंहको घायल किया।।२९।। पीछे उस असुरेश्वरने दश हजार बाहु धारण करके चक्रायुधसे देवीको आच्छादित कर दिया ॥३०॥ फिर संकटनाशिनी दुर्गा भगवतीने क्रोध करके अपने बाणोंसे उन चक्रोंको और उन बाणोंको काट दिया ।। ३१।। तब निशुंभ वेगसे अपनी गदाको लेकर देवीके ऊपर दैत्योंकी सेनासहित मारनेको दौड़ा ॥ ३२ ॥ देवी

शूलहस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम् ।
हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चंडिका ॥ ३४ ॥
भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः ।
महाबलो महावीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ॥३५॥
तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत्ततः ।
शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि ॥ ३६ ॥
ततः सिंहश्चखादोग्रदंष्ट्राक्षुण्णशिरोधरान् ।
असुरांस्तांतथा काली शिवदूती तथापरान् ॥३७॥
कौमारीशक्तिनिर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महासुराः ।
ब्रह्माणीमन्त्रपूतेन तोयेनान्ये निराकृताः ॥३८ ॥

उस फेंकी हुई गदाको अपनी तीक्ष्ण धारवाली तलवारसे काट डाला फिर उस असुरने त्रिशूल लिया ॥ ३३॥ फिर त्रिशूलको हाथमें लिये आते हुए उस दैत्य निशुंभके हृदयको चंडिका देवीने वेगसे वेधनेवाले शूल से वेध डाला ॥ ३४ ॥ तब त्रिशूलसे विंधे हुए दैत्यके हृदयमेंसे एक दूसरा महाबली और पराक्रमी पुरुष चंडिकासे "ठहर" ऐसा कहता हुआ निकला ॥३५॥ फिर देवीने नादपूर्वक हँसकर उस बाहर निकले हुए असुरका शिर खड्गसे काट डाला और वह पृथ्वीपर गिर पड़ा ॥ ३६ ॥ फिर सिंह उन असुरोंको अपनी तीक्ष्ण डाढ़से उनके शिर और होठोंको चोंथ-चोंथ खाने लगा और काली तथा शिवदूती दूसरे असुरोंको खाने लगी ॥ ३७॥ और कितने ही

माहेश्वरीत्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे ।
वाराहीतुण्डघातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि ॥ ३९ ॥
खंडं खंडं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः ।
वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ॥ ४० ॥
केचिद्विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् ।
भक्षिताश्चापरे कालीशिवदूतीमृगाधिपैः ॥ ४१ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

उवाच ॥२॥ श्लोकाः॥३९॥ एवं ॥४१॥ आदितः ॥५४३॥

असुर कौमारीकी शक्तिसे कटकर मर गये और कितने ही ब्रह्माणीके मंत्रसे पवित्रित जलसे नष्ट हो गये ॥३८॥ कितने ही माहेश्वरीके त्रिशूलसे भिन्न होकर गिर पड़े और कितने ही वाराहीके मुखके प्रहारोंसे पृथ्वीपर चूर्ण हो गये ॥३९॥ और वैष्णवीने चक्रसे दानवोंको खंड-खंड कर डाला और कितने दूसरोंको ऐन्द्रीने अपने हाथके अग्रभागसे फेंके हुए वज्रसे नष्ट कर दिया ॥४०॥ कितने ही मर गये, कितने ही घोर संग्रामसे नष्ट हुए और कितने ही बचे खुचोंको काली शिवदूती और सिंहने खा लिये ॥ ४१ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके नवम अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ॥ ९ ॥

अथ दशमोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसंमितम् ।
हन्यमानं बलं चैव शुंभः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥ २ ॥
बलावलेपाद् दुष्टे त्वं मा दुर्गे गर्वमावह ।
अन्यासां बलमाश्रित्य युद्धयसे याऽतिमानिनी ॥ ३ ॥

देव्युवाच ॥ ४ ॥

एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ।
पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः ॥ ५ ॥
ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखा लयम् ।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका ॥ ६ ॥

देव्युवाच ॥ ७ ॥

ऋषि बोले ॥ १ ॥ प्राणोंके समान अपने भाई निशुंभको और सेनाको मरा देख शुंभ क्रोध करके कहने लगा कि ॥२॥ हे दुष्टे दुर्गे ! तू बलके अहंकारसे गर्व मत कर, तू औरोंके बलके आश्रयसे अत्यन्त मानवती होकर लड़ती है ॥ ३ ॥ देवी बोली ॥४॥ कि मैं इस जगत्में एक ही हूं और मुझसे दूसरा कौन है। हे दुष्ट ! ये सब मेरी ही शक्तियां हैं और देख मुझमें ही लय हुई जाती हैं ॥५॥ फिर वे ब्रह्माणी आदि सब देवियां उस देवीके ही शरीरमें लय हो गईं और केवल एक अम्बिका रह गई ॥ ६ ॥ देवी बोली ॥ ७ ॥

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदा स्थिता ।
तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ॥ ८ ॥

ऋषिरुवाच ॥ ९ ॥

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुंभस्य चोभयोः ।
पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम् ॥ १० ॥
शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः ।
तयोर्युद्धमभूद्भूयः सर्वलोकभयङ्करम् ॥ ११ ॥
दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका ।
बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः ॥१२॥
मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।
बभञ्ज लीलयैवोग्रहुंकारोच्चारणादिभिः ॥ १३ ॥

मैं अपनी शक्तिद्वारा बहुतसे रूपोंसे यहां खड़ी थी सो उन सब रूपोंको खैंच करके अब मैं अकेली स्थित हूं तु संग्राममें स्थिर हो ॥८॥ ऋषि बोले ॥९॥ कि फिर सब देवता और असुरोंके देखते-देखते देवी और शुंभ इन दोनोंका घोर युद्ध होने लगा ॥ १० ॥ शरोंको वर्षासे, तीक्ष्ण शस्त्रोंसे तथा दारुण अस्त्रोंसे उन दोनोंका संपूर्ण लोकको भय उत्पन्न करनेवाला फिर युद्ध हुआ ॥ ११ ॥ अम्बिकाने जो सैकड़ों दिव्य शस्त्र फेंके उनको उस दैत्येन्द्रने उन शस्त्रोंको काटनेवाले शस्त्रोंसे काट डाला ॥ १२ ॥ और फिर उस असुरने जो दिव्य अस्त्र फेंके थे उनको लीलापूर्वक अपने हुंकार उच्चारणोंसे देवीने तोड़ दिया ॥ १३ ॥

ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः ।
साऽपि तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः॥ १४॥
छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे ।
चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम्॥ १५॥
ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रं च भानुमत् ।
अभ्यधावत्तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः ॥ १६ ॥
तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चंडिका ।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम् ॥ १७ ॥
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः ।
जग्राह मुद्गरं घोरमंबिकानिधनोद्यतः ॥ १८ ॥

फिर उस असुरने सैकड़ों बाणोंसे देवीको ढक दिया और उस देवीने क्रोधकरके अपने बाणोंसे उस असुरका धनुष काट डाला॥ १४॥ जब धनुष कटकर गिर पड़ा तब उस दैत्येंद्रने शक्ति ली, देवीने उसके हाथमें स्थित उस शक्तिको भी चक्रसे काट अलग किया ॥ १५॥ फिर दैत्योंका अधिपेश्वर चमकती हुई तलवार और ढाल लेकर देवीके सम्मुख दौड़ा॥ १६ ॥ उसके आतेही चंडिकाने शीघ्रही खड्गको काट दिया और धनुषसे फेंके हुए तीखे बाणोंसे सूर्यकी किरणके समान सुन्दर ढालको काट डाला ॥ १७ ॥ जब उस दैत्येश्वरका घोड़ा मर गया, धनुष टूट गया और सारथी मारा गया तब वह घोर मुद्गर लेकर

चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः ।
तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् ॥ १९ ॥
स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः ।
देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥ २० ॥
तलप्रहाराभिहतो निपपात महीतले ।
स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥ २१ ॥
उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः ।
तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चंडिका ॥ २२ ॥
नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चंडिका च परस्परम् ।
चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ॥ २३ ॥

अम्बिकाके मारनेके लिये उद्यत हुआ ॥ १८ ॥ फिर देवीने सम्मुख आये हुए उस असुरके मुद्गरको पैने बाणोंसे काट दिया तो भी वह घूंसा तानकर देवीकी ओर अति वेगसे दौड़ा ॥ १९ ॥ और उस दैत्येश्वरने देवीके हृदयमें घूसा मारा और उस देवीने भी थप्पड़से उसकी छातीमें प्रहार किया ॥ २० ॥ और थप्पड़के प्रहारसे चोट खाकर वह दैत्यराज पृथ्वीपर गिर पड़ा और फिर शीघ्रही उठ खड़ा हुआ ॥ २१ ॥ और वह देवीको पकड़कर और उछलकर आकाशमें जा खड़ा हुआ, वहाँ भी चंडिकाने निराधार हो उस दैत्यके साथ युद्ध किया ॥ २२ ॥ तब आकाशमें दैत्य और चंडिकाने आपसमें सिद्ध और मुनियोंको आश्चर्य करानेवाला यह प्रथम युद्ध किया ॥ २३ ॥

ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनांबिका सह ।
उत्पाट्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणीतले ॥ २४ ॥
स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगतः ।
अभ्यधावत दुष्टात्मा चंडिकानिधनेच्छया ॥२५॥
तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम् ।
जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि ॥२६॥
स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः ।
चालयन्सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम् ॥२७॥
ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन्दुरात्मनि ।
जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः ॥२८॥

फिर चंडिकाने बहुत कालतक उसके साथ युद्ध करके उसे ऊपरको उछालकर घुमाया और पृथ्वीपर फेंक दिया ॥२४॥ पृथ्वीपर गिरनेके पीछे वह दुष्ट वेगसे घूंसा सम्भालकर चंडिकाको मारनेकी इच्छासे दौड़ा ॥२५॥ फिर देवीने उस आते हुए संपूर्ण दैत्योंके अधिपतिको त्रिशूलसे छातीमें वेधकर पृथ्वीपर गिरा दिया ॥ २६ ॥ और वह देवीके शूलके अग्रभागसे घायल हुआ प्राणरहित होकर संपूर्ण पृथ्वीपर समुद्र द्वीप और पर्वतोंको कँपाता हुआ भूमिपर गिर पड़ा ॥२७॥ फिर उस दुष्टात्माके मरनेपर संपूर्ण जगत् अत्यन्त प्रसन्न और सुखी हो गया और आकाश निर्मल हो गया ॥ २८ ॥

उत्पातमेघाः सोल्का ये प्रागासँस्ते शमं ययुः ।
सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासँस्तत्र पातिते ॥ २९ ॥
ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः ।
बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः ॥३०॥
अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरोगणाः ।
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्दिवाकरः॥३१॥
जज्वलुश्चाग्नयःशान्ताशांतादिग्जनितस्वनाः॥३२॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

उवाच॥४॥अर्ध१॥श्लोकाः॥२७॥एवं॥३२॥आदितः५७५॥

उसके गिरनेपर जो पहले उत्पातके मेघ और उल्कापात हुए थे वे सब शान्त हो गये और नदियां अपने-अपने मार्गमें बहने लगीं ॥ २९ ॥ और उसके मरनेपर सम्पूर्ण देवतागण अत्यन्त हर्षित हुए, गन्धर्व मधुर-मधुर स्वरसे गाने लगे ॥३०॥ कितने ही बाजे बजाने लगे और अप्सराओंके समूह नाचने लगे, सुन्दर शीतलवायु चलने लगी और सूर्यकी कांति सुन्दर हो गई ॥ ३१ ॥ यज्ञादिकोंकी बुझी हुई अग्नि जलने लगी और दिशाओंमें शांत शब्द होने लगे ॥ ३२ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके दशम अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ।

अथ एकादशोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् । कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभाद्विकाशिवक्त्राब्जविकाशिताशाः ॥ २ ॥ देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य । प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥ ३ ॥ आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः स्थितासि । अपां स्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ॥ ४ ॥

ऋषि कहने लगे ॥१॥ कि जब देवीने महासुरेन्द्रको मार डाला तब इंद्र और अग्निको आगे करके सम्पूर्ण देवगण अपने इष्टफलकी प्राप्ति हो जानेके कारण अपने प्रसन्न मुखकमलोंसे दिशाओंको प्रकाशित करते हुए उस कात्यायनी देवी की स्तुति करने लगे॥२॥ हे शरणागतके दुःख हरनेवाली देवि! प्रसन्न हो, हे सम्पूर्ण जगत्की माता! प्रसन्न हो, हे विश्वकी ईश्वरि! प्रसन्न हो विश्वकी रक्षा करो और हे देवि! तुमही चर और अचरकी ईश्वरी हो ॥ ३ ॥ तुम सम्पूर्ण जगत्की एक ही आधारभूत हो इसीलिये पृथ्वीरूपसे स्थित हो और हे अतुल पराक्रमवाली! तुम जलरूपसे स्थित हो और

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं पर-
मासि माया। संमोहितं देवि समस्तमेतत्त्वं वै
प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥५॥ विद्याः समस्तास्तव
देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु। त्वयै-
कया पूरितमम्बयैतत्का ते स्तुतिः स्तव्यपरा
परोक्तिः॥६॥सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्तिप्रदायिनी।
त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः
॥ ७ ॥ सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते।
स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

संपूर्ण जगत् तुमसे ही व्याप्त हो रहा है ॥ ४ ॥ तुम अतुल वीर्यवती विष्णुकी शक्ति हो, विश्वकी बीज हो, परम माया हो और हे देवि ! तुमने ही इस संपूर्ण संसारको मोहित कर रक्खा है और पृथ्वीपर तुम प्रसन्न होनेसे मुक्तिकी कारण अर्थात् देने-वाली हो ॥५॥ और हे देवि ! संसारमें जितनी विद्याएँ हैं और जितनी स्त्रियाँ हैं वे सब तुम्हारा ही भेद हैं और एक तुम ही से यह संपूर्ण जगत् पूरित हो रहा है, तुम्हारी क्या स्तुति करें तुम स्तुतिसे परे हो और स्तुतिकी परम उक्ति हो ॥६॥ तुम सबोंमें प्रकाशित हो और स्वर्ग मुक्तिकी देनेवाली हो और जो तुम स्तुति की जाओ तो तुम्हारी स्तुतिके लिये कौनसे सुन्दर स्तव हैं अर्थात् कोई नहीं ॥ ७ ॥ हे संपूर्ण जनोंके हृदयमें बुद्धिरूपसे स्थित होनेवाली ! हे स्वर्गमोक्षके देनेवाली !

कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदायिनि ।
विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥९॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते॥१०॥
सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥
हंसयुक्तविमानस्थे ब्रह्माणीरूपधारिणि ।
कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥१३॥

हे देवि ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥८॥ हे क्षण-मुहूर्त आदि कालकरके मनुष्योंको परिणाम (अन्त) का देनेवाली ! और हे संसारके नाशमें रुद्ररूप शक्ति ! हे नारायणि ! आपको नमस्कार है ॥९॥ हे संपूर्ण मंगलोंकी मंगलस्वरूपिणी ! हे शिवे ! हे संपूर्ण अर्थके साधन करनेवाली ! हे शरण देनेवाली ! हे तीन नेत्रोंवाली ! हे गौरि ! हे नारायणि तुमको नमस्कार है॥१०॥ हे सृष्टि, स्थिति और विनाशकी शक्तिरूपे ! हे सनातनि ! हे गुणाश्रये ! हे गुणमयि ! हे नारायणि ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ ११ ॥ हे शरणागत दीनोंको दुःखसे रक्षा करनेमें तत्पर ! हे सबोंको पीड़ा हरनेवाली ! हे देवि ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥ १२ ॥ हंसयुक्त विमानपर स्थित होनेवाली ! हे ब्रह्माणीका रूप

त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनी ।
माहेश्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१४॥
मयूरकुक्कुटवृते महाशक्तिधरेऽनघे ।
कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१५॥
शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गगृहीतपरमायुधे ।
प्रसीद वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१६॥
गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे ।
वराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१७॥
नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान्कृतोद्यमे ।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१८॥

धारण करने वाली ! कुशोदकको छिड़कनेवाली ! हे देवि ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है॥१३॥ हे माहेश्वरीस्वरूपसे त्रिशूल चन्द्र और सर्पको धारण करनेवाली और महावृषभपर चढ़नेवाली ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥१४॥ हे कौमारीके स्वरूपसे शोभित ! हे मयूरके पंखोंसे आवृत्त ! हे महाशक्तिको धारण करनेवाली ! हे पापरहिते ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥१५॥ हे वैष्णवीरूपसे शंख, चक्र, गदा और धनुष इन सुन्दर आयुधोंको धारण करनेवाली नारायणि ! प्रसन्न होओ, आपको नमस्कार है ॥ १६ ॥ हे उग्र और बड़े चक्रको धारण करने वाली ! हे दांतसे पृथ्वीको उठानेवाली ! हे वाराहरूपिणि ! हे शिवे ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥१७॥ हे उग्रनृसिंहरूपसे दैत्योंके मारनेमें उद्यम करनेवाली। हे तीनों लोकोंकी रक्षा करनेवाली ! हे नारायणि !

किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले ।
वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१९॥
शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले ।
घोररूपे महारावे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२०॥
दंष्ट्राकरालवदने शिरोमालाविभूषणे ।
चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२१॥
लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टि स्वधे ध्रुवे ।
महारात्रि महाविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२२॥
मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवितामसि ।
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२३॥

तुमको नमस्कार है ॥ १८ ॥ हे किरीट धारण करनेवाली ! हे महावज्रवाली ! हे सहस्र नेत्रोंसे उज्ज्वल ! हे वृत्रासुरके प्राण हरने वाली ऐन्द्रि ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥१९॥ हे शिवदूतीके स्वरूपमे दैत्योंके अधिक बलको नाश करनेवाली ! हे घोररूपिणि ! हे महान् शब्द करनेवाली ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥२०॥ हे दंष्ट्रासे कराल मुखवाली ! हे मुण्डमालासे शोभित ! हे चामुंडे ! मुंडनाशिनि हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥२१॥ हे लक्ष्मि ! हे लज्जारूपिणि ! हे महाविद्ये ! हे श्रद्धारूपिणि ! हे पुष्टिस्वरूपिणि ! हे स्वधारूपिणि ! हे निश्चलरूपिणि ! हे महारात्रि ! हे महामाये ! हे नारायणि ! तुमको नमस्कार है ॥२२॥ हे बुद्धिरूपे ! हे सरस्वति ! हे वरे ! सत्वप्रधाने ! हे रजोगुण

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते ॥२४॥
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम् ।
पातु नः सर्वभूतेभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तुते ॥२५॥
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तुते ॥२६॥
हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्यो नःसुतानिव ॥२७॥
असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चंडिके त्वां नता वयम् ॥२८॥

वति । हे तामसरूपिणि ! हे निश्चले ! हे ईश्वरि ! हे नारायणि ! प्रसन्न होओ, तुमको नमस्कार है ॥२३॥ हे सर्वस्वरूप ! हे सर्वेश्वरि, हे सर्वशक्तिमति ! हे देवि ! हमारी भयोंसे रक्षा करो। हे दुर्गे ! हे देवि ! तुमको नमस्कार है ॥२४॥ हे कात्यायनि ! सौम्य और तीन नेत्रोंसे शोभायमान यह तुम्हारा मुख सम्पूर्ण प्राणियोंसे हमारी रक्षा करे, हम तुमको नमस्कार करते हैं॥ २५॥ और हे भद्रकालि ! ज्वालाओंसे कराल, अत्यन्त उग्र और संपूर्ण असुरोंका नाश करनेवाला यह तुम्हारा त्रिशूल भयसे हमारी रक्षा करे, हम तुमको नमस्कार करते हैं ॥ २६ ॥ और हे देवि ! जो अपने शब्दसे जगत्को पूरित करके दैत्योंके तेजको हरती है ऐसी तुम्हारी घंटा पुत्रोंके समान हमारी संपूर्ण पापोंसे रक्षा करे ॥२७॥ और हे चण्डिके ! असुरोंके

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान्सकला-
नभीष्टान्। त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वा-
माश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥ २९ ॥ एतत्कृतं
यत्कदनं त्वयाऽद्य धर्मद्विषां देवि महासुराणाम्।
रूपैरनेकैर्बहुधात्ममूर्तिं कृत्वाऽम्बिके तत्प्रकरोति
काऽन्या ॥ ३० ॥ विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या। ममत्वगर्तेऽति
महान्धकारे विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥ ३१ ॥

रुधिर और चर्बीरूपी पंकसे चर्चित और किरणोंसे उज्ज्वल यह तुम्हारा खड्ग हमारा कल्याण करे, हम तुमको नमस्कार करते हैं॥२८॥जब तुम प्रसन्न होती हो तब संपूर्ण रोगोंको हर लेती हो और जब रुष्ट होती हो संपूर्ण अभीष्ट कामोंको नष्ट करती हो और तुम्हारे आश्रित मनुष्योंको दुःख नहीं होता और जो तुम्हारा आश्रय करते हैं वे दूसरोंको आश्रय देनेके योग्य हो जाते हैं ॥ २९ ॥ और हे देवि ! अनेक रूपोंके द्वारा बहुत प्रकारकी मूर्ति धारण करके जो आज तुमने धर्मके शत्रु ऐसे बड़े असुरोंका वध किया है सो क्या कोई अन्य स्त्री कर सकती है ॥३०॥ और चतुर्दश विद्याओंके और षट्शास्त्रोंके और ज्ञानरूप दीपक ऐसे आद्यवाक्य कहिये वेदोंके होनेपर भी घोर अन्धकारवाले इस ममतारूपी गढेमें इस संसारको तुम्हारे अतिरिक्त और दूसरा

रक्षांसि यत्रोग्रविषाश्च नागा यत्रारयो दस्युबलानि यत्र। दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥३२॥ विश्वेश्वरी त्वं परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्। विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥ ३३ ॥ देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीतेर्नित्यं यथाऽसुरवधादधुनैव सद्यः। पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु उत्पातपाकजनितांश्च महोपसर्गान् ॥ ३४ ॥

कौन अधिक घुमाता है ॥३१॥ और जहां राक्षस हैं, जहां क्रूर सर्प हैं; जहां शत्रु हैं, जहां चोरोंके झुंड हैं वहां और जहां दावानल है वहां और समुद्रके मध्यमें तुम स्थित होकर विश्वका पालन करती हो ॥ ३२ ॥ और तुम विश्वेश्वरी हो क्योंकि विश्वको धारण करती हो और तुम विश्वात्मिका हो इसलिये विश्वको धारण करती हो और विश्वेश जो ब्रह्मा विष्णु महेशादि हैं उन द्वारा वंदना की जाती हो और जो लोग तुम्हारे सामने नम्र होते हैं वे संसारको आश्रय देनेवाले हो जाते हैं ॥३३॥ हे देवि! तुम प्रसन्न होओ और जिस प्रकार असुरोंके मारनेसे अभी सद्यः रक्षा की है उसी प्रकार शत्रुके भयसे सर्वदा हमारी रक्षा करो और सम्पूर्ण जगत्के पापोंको और उत्पातोंके होनेसे उठे हुए जो जो महामारी

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ॥३५॥

देव्युवाच ॥ ३६ ॥

वरदाऽहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥ ३७ ॥

देवा ऊचुः ॥ ३८ ॥

सर्वबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ ३९ ॥

देव्युवाच ॥ ४० ॥

वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतिमे युगे।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ॥४१॥

आदि उपद्रव हैं उनको शीघ्र शांत कर दो ॥३४॥ और हे देवि ! हे संसारकी आपत्तिको दूर करनेवाली ! जो लोग प्रणत होते हैं, उनपर प्रसन्न होओ और हे तीनों लोकके वासियोंकी पूज्य ! तुम लोगोंको वर देनेवाली होओ ॥३५॥ देवी बोली ॥३६॥ कि हे देवगण ! मैं वर देनेवाली हूं जो तुम्हारे मनमें इच्छा हो सो जगत्के उपकार करनेवाले वरको मांगो, मैं देती हूं ॥३७॥ देवता कहने लगे ॥ ३८ ॥ कि हे अखिलेश्वरि ! त्रैलोक्यकी संपूर्ण बाधाको शांत करनेवाला यही कार्य करना चाहिये कि हमारे शत्रुका नाश हो ॥३९॥ देवी बोली ॥ ४० ॥ कि वैवस्वत मन्वन्तरमें जब अट्ठाईसवां युग आवेगा तब दूसरे शुंभ और निशुंभ महासुर उत्पन्न

नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसंभवा ।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विंध्याचलनिवासिनी॥४२॥
पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥४३॥
भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान्वैप्रचित्तान्महासुरान् ।
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमीकुसुमोपमाः ॥४४॥
ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः ।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम्॥४५॥
भूयश्च शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि ।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ संभविष्याम्ययोनिजा॥४६॥

होंगे ॥ ४१ ॥ फिर मैं नन्दगोपके घरमें यशोदाके गर्भसे उत्पन्न होकर और विंध्याचलवासिनी होकर उन दोनों का नाश करूँगी ॥४२॥ और फिर अति भयंकर रूपसे पृथ्वी-तलपर अवतार लेकर वैप्रचित्त नामक दानवोंको मारूंगी ॥४३॥ तब उन उग्र वैप्रचित्त नामक महाअसुरोंको मुझे भक्षण करती हुईके दांत अनारके पुष्पके समान लाल हो जायँगे ॥ ४४ ॥ फिर देवता स्वर्गमें और मनुष्यलोकमें मनुष्य मेरी स्तुति करेंगे और निरन्तर मुझको रक्तदन्तिका कहेंगे ॥४५॥ फिर जब सौ वर्षतक वर्षा नहीं होगी तब जलके अभावमें मुनि मेरी स्तुति करेंगे और मैं मनुष्ययोनिके विना ही स्वयं

ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् ।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः॥४७॥
ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः ।
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राणधारकैः ॥४८॥
शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि ।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महासुरम् ॥४९॥
दुर्गादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ॥५०॥
रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात् ।
तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः ॥५१॥
भीमादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
यदाऽरुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति॥५२॥

उत्पन्न होऊँगी ॥ ४६ ॥ फिर मैं सौ नेत्रोंसे मुनियोंको देखूंगी तब मनुष्य मुझे शताक्षी कहेंगे ॥४७॥ और हे देवताओ ! फिर जबतक वर्षा नहीं होगी तबतक मैं अपने शरीरसे उत्पन्न हुए प्राणरक्षक शाकोंसे संपूर्ण मनुष्योंका पालन करूँगी ॥ ४८ ॥ तब फिर मैं पृथ्वीपर शाकंभरीके नामसे विख्यात होऊंगी और वहां ही दुर्ग नामक महासुरको मारूँगी ॥४९॥ तब मेरा नाम दुर्गादेवी विख्यात होगा और फिर मैं भयंकर रूप धारण करके हिमाचलमें मुनियोंकी रक्षाके कारण राक्षसोंको भक्षण करूँगी तब सब मुनिजन नम्रमूर्ति होकर मेरी स्तुति करेंगे ॥५०॥५१॥ और तब मेरा नाम

तदाऽहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येयषट्पदम् ।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम् ॥५३॥
भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः ।
इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥५४॥
तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥ ५५ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये नारायणीस्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

उवाच॥४॥अर्ध॥१॥श्लोकाः॥५०एवं॥५५॥आदितः६३०॥

अथ द्वादशोऽध्यायः

देव्युवाच ॥ १ ॥

एभिस्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः ।
तस्याहं सकलां बाधां नाशयिष्याम्यसंशयम् ॥२॥

भीमा देवी होगा कि जब अरुण नामक दैत्य त्रैलोक्यमें महाबाधा करेगा ॥५२॥ तब मैं असंख्य भ्रमरोंका रूप धर कर त्रैलोक्यके हितके लिये उस महाअसुरको मारूंगी ॥५३॥ और तब लोग मेरी भ्रामरीके नामसे सर्वत्र स्तुति करेंगे और इस प्रकार जब-जब दानवोंसे बाधा उत्पन्न होगी ॥५४॥ तब-तब मैं अवतार लेकर शत्रुओंका नाश करूंगी ॥५५॥ रा०दुर्गापाठके एकादश अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ

देवी कहने लगी ॥१॥ कि जो पुरुष सावधान होकर इन स्तवोंसे मेरी स्तुति नित्य करेगा उसकी संपूर्ण बाधाको मैं निःसंदेह शांत करूंगी ॥ २ ॥ जो लोग मधुकैटभका नाश,

मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्वद्वधं शुम्भनिशुम्भयोः ॥३॥
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः ।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ॥४॥
न तेषां दुष्कृतं किंचिद्दुष्कृतोत्था न चापदः ।
भविष्यन्ति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ॥५॥
शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः ।
न शस्त्रानलतोयौघात्कदाचित्संभविष्यति ॥ ६ ॥
तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः ।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं महत् ॥७॥
उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान् ।
तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ॥ ८ ॥

महिषासुरका घात और शुंभ निशुंभके वध इनका कीर्तन करेंगे ॥३॥ अष्टमी, चतुर्दशी और नवमीके दिन एकाग्र चित्तसे भक्तिपूर्वक मेरे इस उत्तम माहात्म्यको सुनेंगे ॥४॥ उनको कुछ पाप न होगा और पापसे उत्पन्न हुई कोई आपत्ति न होगी और दारिद्र्य तथा प्रियजनका वियोग भी नहीं होगा ॥५॥ उसको शत्रुसे, चोरसे तथा राजासे और शस्त्र, अग्नि, और जलके समूहसे भय न होगा ॥६॥ इसलिये सावधान होकर भक्तिपूर्वक इस मेरे माहात्म्यको पढ़ना और सुनना चाहिये, क्योंकि यह उत्तम और बड़े कल्याणका स्थान है ॥ ७ ॥ यह मेरा माहात्म्य महामारीसे उत्पन्न हुए सम्पूर्ण

यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम ।
सदा न तद्विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ९॥
बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्ये महोत्सवे ।
सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ॥१०॥
जानताजानता वापि बलिपूजां तथा कृताम् ।
प्रतीक्षिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथा कृतम्॥११॥
शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी ।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः १२॥
सर्वबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः ।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥१३॥

उपद्रवों और तीन प्रकारके सन्तापोंको दूर करता है ॥८॥ जिस घरमें यह मेरा माहात्म्य अच्छी प्रकारसे नित्य पढ़ा जाता है उस स्थानको मैं कभी नहीं त्यागती हूं और उसीके पास मैं रहती हूं ॥९॥ और बलिप्रदानमें, पूजामें अग्निकार्यमें और महोत्सवमें मेरे इस संपूर्ण चरित्रको पढ़ना और सुनना चाहिये ॥१०॥ और जानकर वा विना जाने जो कुछ बलिपूजा की जाती है वा अग्निमें होम किया जाता है उस सबको मैं प्रीतिपूर्वक ग्रहण करती हूं ॥११॥ और शरत्कालमें प्रत्येक वर्षकी महापूजा की जाती है उसमें मेरे इस माहात्म्यको भक्तिपूर्वक सुनकर ॥ १२ ॥ मनुष्य मेरे प्रसादसे सम्पूर्ण बाधाओंसे मुक्त और धन धान्य और पुत्रोंसे युक्त हो जायगा

श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः ।
पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ॥ १४ ॥
रिपवः संक्षयं यांति कल्याणं चोपपद्यते ।
नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥ १५ ॥
शांतिकर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने ।
ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥ १६ ॥
उपसर्गाः शमं यांति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्नमुपजायते ॥ १७ ॥
बालग्रहाभिभूतानां बालानां शांतिकारकम् ।
संघातभेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥ १८ ॥

इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ १३ ॥ और मेरे इस माहात्म्यको, शुभ उत्पत्तियोंको और पराक्रमको सुनकर मनुष्य युद्धोंमें निर्भय हो जाता है ॥ १४ ॥ शत्रु नष्ट हो जाते हैं और कल्याण होता है और मेरे माहात्म्यको सुननेवाले मनुष्योंका कुल आनन्दित होता है ॥ १५ ॥ और सब शांतिकर्ममें दुःस्वप्नदर्शनमें और ग्रहोंकी उग्र पीडामें मेरे माहात्म्यको सुने ॥ १६ ॥ तो उपद्रव और दारुण ग्रहपीडा शांत हो जाती है और यदि मनुष्यने बुरा स्वप्न देखा हो तो वह अच्छा स्वप्न हो जाता है ॥ १७ ॥ यह मेरा माहात्म्य पूतना डाकिनी शाकिनी बालग्रहोंसे ग्रस्त हुए बालकोंकी शांति करनेवाला है और यदि मनुष्योंमें आपसमें

दुर्वृत्तानामशेषाणां बलहानिकरं परम् ।
रक्षोभूतपिशाचानां पठनादेव नाशनम् ॥ १९ ॥
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधिकारकम् ।
पशुपुष्पार्घधूपैश्च गंधदीपैस्तथोत्तमैः ॥ २० ॥
विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् ।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ॥ २१ ॥
प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन्सकृत्सुचरिते श्रुते ।
श्रुतं हरति पापानि तथारोग्यं प्रयच्छति ॥ २२ ॥
रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम ॥
युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिबर्हणम् ॥ २३ ॥

फूट फैल जाय तो उत्तम रीतिसे मित्रता करनेवाला है॥१८॥ और सम्पूर्ण दुराचारी जनोंके परम बलकी हानि करनेवाला है और इसे पाठ करनेसेही राक्षस भूत और पिसाचोंका नाश हो जाता है ॥१९॥ यह मेरा सम्पूर्ण माहात्म्य पाठकको मेरे पास रखनेवाला है और पशु पुष्प अर्घ धूप और उत्तम-उत्तम गन्ध दीप इन करके ॥२०॥ और ब्राह्मण भोजन होम और रात्रि दिन अखंड अभिषेकोंसे और अन्य अनेक-अनेक प्रकारके भोग लगानेसे प्रत्येक वर्ष ॥ २१ ॥ जो कुछ मेरे प्रीत्यर्थ किया जाता है वह इस माहात्म्यके पढ़ने और सुननेसे ही हो सकता है और इसका सुनना पापोंको हरता है और आरोग्यताको देता है॥२२॥मेरे जन्मोंका कीर्तन भूतोंसे रक्षा करता

तस्मिञ्छ्रुते वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते ।
युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः २४॥
ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् ।
अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्निपरिवारितः ॥ २५॥
दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः ।
सिंहव्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः ॥२६॥
राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बंधगतोऽपि वा ।
आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ॥२७॥
पतत्सु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे ।
सर्वबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ॥ २८॥

है और युद्धोंमें जो दुष्ट दैत्योंके नाशका चरित्र है ॥२३॥ उसके सुननेसे मनुष्योंको शत्रुसे किया हुआ भय नहीं होता है और जो स्तुतियां तुमने और ब्रह्मऋषियोंने की हैं ॥२४॥ और ब्रह्माने जो स्तुति की है ये सब शुभ मति देती हैं और वनमें दावाग्निसे घिरा हुआ ॥ २५ ॥ और शून्य मार्गमें चोरोंसे पकड़ा गया वा निर्जन देशमें शत्रुओंसे घिरा हुआ ॥२६॥ अथवा राजाने जिसको क्रोधसे मारनेके लिये आज्ञा देदी हो अथवा बंधनमें पड़ा हो वा जिसे लू लगी हो अथवा जो महासमुद्रमें छोटीसी डोंगीपर बैठा हो ॥ २७ ॥ और अत्यन्त दारुण युद्धमें कि जहां शस्त्र चल रहे हों अथवा बड़ी भयंकर सम्पूर्ण बाधाओंसे; वेदनाओंसे भी दुःखी हुआ ॥२८॥

स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत संकटात् ।
मम प्रभावात्सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ॥२९॥
दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ॥ ३० ॥
ऋषिरुवाच ॥ ३१ ॥
इत्युक्त्वा सा भगवती चंडिका चंडविक्रमा ॥३२॥
पश्यतामेव देवानां तत्रैवान्तरधीयत ।
तेऽपि देवा निरातङ्काः स्वधिकारान्यथा पुरा॥३३॥
यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः ।
दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि ॥३४॥
जगद्विध्वंसके तस्मिन्महोग्रेऽतुलविक्रमे ।
निशुम्भे च महावीर्ये शेषाः पातालमाययुः ॥३५॥

मनुष्य मेरे इस माहात्म्यके स्मरण करनेसे संकटसे छूट जाता है और मेरे प्रभावसे सिंहादि चोर और शत्रु॥२९॥मेरे चरित्रका पाठ करतेही दूरसेही भाग जाते हैं॥३०॥ ऋषि कहने लगे ॥३१॥ कि उग्र पराक्रमवाली वह चण्डिका भगवती यह कहकर ॥ ३२ ॥ देवताओंके देखतेही देखते वहां ही अन्तर्धान हो गई, यज्ञके भोगनेवाले शत्रुरहित सब देवताओंने भी निर्भय होकर पूर्वके समान अपने-अपने अधिकारोंको पाया और देवीसे देवताओंके वैरी और जगत्के विध्वंस करनेवाले बड़े उग्र अतुल पराक्रमी और महाबली उस निशुंभके मारे जानेपर बाकी संम्पूर्ण दैत्य पातालको चले गये॥३३-३५॥

एवं भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः ।
संभूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम् ॥ ३६ ॥
तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते ।
सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ॥ ३७ ॥
व्याप्तं तयैतत्सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर ।
महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया ॥ ३८ ॥
सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा ।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥ ३९ ॥
भवकाले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धिप्रदा गृहे ।
सैवाभावे तथा लक्ष्मीर्विनाशायोपजायते ॥ ४० ॥

हे राजन् ! इस प्रकार वह भगवती नित्या देवी बारंबार प्रकट होकर जगत्‌का परिपालन करती है ॥ ३६ ॥ वही संसारको मोहित करती है और उत्पन्न करती है और जब उससे याचना करते हैं तो विशेष ज्ञान और जब प्रसन्न होती तब ऋद्धि देती है ॥ ३७ ॥ हे राजन् ! यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उससे व्याप्त हो रहा है और प्रलयकाल में महामारीस्वरूपा महाकालीसे व्याप्त होता है ॥ ३८ ॥ और वही जब काल आता है तो महामारीरूप हो जाती है और संसारोत्पत्तिके समय वही सृष्टिरूप हो जाती है और रक्षाकालमें वही सनातनी देवी प्राणियोंकी रक्षा करती है ॥ ३९ ॥ और जब सम्पत्तिका समय आता है तब मनुष्योंके घरमें वही लक्ष्मी और बुद्धि-दात्री हो जाती है और आपत्तिके समयमें वही लक्ष्मी विनाश

स्तुता संपूजिता पुष्पैर्धूपगन्धादिभिस्तथा ।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे तथा शुभाम् ॥४१॥

इति श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
भगवतीवाक्यं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

उवाच२॥अर्ध२॥श्लोकाः॥३७॥एवं४१॥एवमादितः।६७१॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

एतत्ते कथितं भूप देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ।
एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ॥ २ ॥
विद्या तथैव क्रियते भगवद्विष्णुमायया ।
तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ॥ ३ ॥

कर देती है ॥ ४० ॥ और स्तुति करनेसे तथा पुष्प धूप गन्धादिसे पूजन करनेसे वह धन पुत्र धर्ममें शुभ मतिको देती है ॥ ४१ ॥

पं रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके
बारहवें अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ।

ऋषि बोले ॥ १ ॥ हे राजन् ! हमने तुमसे यह देवीका उत्तम माहात्म्य कहा । उस देवीका ऐसा प्रभाव है कि वह इस जगत्को धारण करती है ॥ २ ॥ और भगवान् विष्णुकी जिस मायासे तत्त्वज्ञान होता है उसीसे तुम और यह

मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे ।
तामुपैहि महाराज शरणं परमेश्वरीम् ॥ ४ ॥
आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ॥ ५ ॥

मार्कण्डेय उवाच ॥ ६ ॥

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ॥ ७ ॥
प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम् ।
निर्विण्णोऽतिममत्वेन राज्यापहरणेन च ॥ ८ ॥
जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने ।
संदर्शनार्थमम्बाया नदीपुलिनसंस्थितः ॥ ९ ॥
स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन् ।
तौ तस्मिन्पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमयीम् १०॥

वैश्य तथा और दूसरे ज्ञानी पुरुष ॥३॥ मोह जाते हैं, मोहे गये हैं और मोहे जायँगे इसलिये हे महाराज ! उस परमेश्वरीकीही शरणमें जाओ ॥ ४ ॥ आराधना करनेसे वही मनुष्योंको भोग स्वर्ग और मोक्षको देनेवाली है ॥५॥ मार्कंडेयजी बोले ॥ ६ ॥ कि यह सुरथ नाम राजा उन ऋषिका यह वचन सुनकर ॥७॥ उन उग्रवती महाभाग ऋषिको प्रणाम करके अत्यन्त ममतासे और राज्यके हरणसे व्याकुल हो ॥८॥ वह राजा शीघ्र तप करनेके लिये चला गया, और हे महामुने ! वह वैश्य जगदम्बाके दर्शनके लिये नदी किनारे स्थित हो गया ॥ ९ ॥ और वहां उस वैश्यने देवीसूक्तका जप

अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्पधूपाग्नितर्पणैः ।
निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ ॥११॥
ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रासृगुक्षितम् ।
एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः ॥ १२ ॥
परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चंडिका ॥ १३ ॥
देव्युवाच ॥ १४ ॥
यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन ॥१५॥
मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥१६॥
मार्कण्डेय उवाच ॥ १७ ॥
ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि ॥ १८ ॥

करते-करते महान् उग्र तप किया और फिर वे दोनों उस नदीके किनारे पर देवी की मृत्तिकाकी मूर्ति बनाकर ॥१०॥ पुष्प धूप, होम, तर्पण करके उसीकी पूजा करते थे और प्रथम अल्प आहार और फिर निराहार हो उस देवीमें चित्त लगाकर और सावधान होकर ॥११॥ वे दोनों अपने शरीरका रुधिर टपका-टपका कर बलि देने लगे, इस प्रकार तीन वर्षतक एकाग्रचित्तसे आराधना करते हुए दोनोंसे ॥ १२ ॥ जगद्धात्री चण्डिका संतुष्ट हुई और प्रत्यक्ष बोली ॥ १३ ॥ देवी कहने लगी ॥१४॥ कि हे राजन् ! तुझे जिस बातकी प्रार्थना करनी हो और हे वैश्य ! तुझको जो प्रार्थना करनी है ॥ १५॥ वह मुझसे सब लाभ करो मैं प्रसन्न हूं और मैं वह तुझको दूंगी ॥१६॥ मार्कण्डेयजी बोले ॥ १७ ॥ तब राजा कहने लगा कि अगले जन्ममें अखंड राज्य ॥ १८ ॥ और इस जन्ममें

अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ।
सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः ॥१९॥
ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम् ॥२०॥
देव्युवाच ॥ २१ ॥
स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान्॥२२॥
हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ।
मृतश्च भूयः संप्राप्य जन्म देवाद्विवस्वतः ॥२३॥
सावर्णिको नाम मनुर्भवान्भुवि भविष्यति ।
वैश्यवर्य त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवाञ्छितः॥२४॥
तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति॥२५॥
मार्कण्डेय उवाच ॥ २६ ॥
इति दत्त्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् ॥ २७ ॥

अपने बलसे शत्रुओंको मारकर अपना राज्य पाऊं और फिर उस व्याकुलचित्त बुद्धिमान् वैश्यने भी " यह मेरा है " यह "मैं हूं"इस प्रकार मोहके संगका नाशक ज्ञान मांगा ॥१९॥ ॥ २० ॥ देवी बोली ॥२१॥ हे राजन् ! थोड़े ही दिनोंमें तू अपना राज्य पायेगा ॥२२॥ और वैरियोंको मारकर तेरा वह, अखण्ड राज्य होगा और अब मरकर फिर सूर्यदेवतासे जन्म पाकर ॥२३॥ तू पृथ्वीपर सावर्णि नामक मनु होगा और हे वैश्यवर्य ! तैने जो मुझसे मनोवांछित वर मांगा ॥२४॥ सो मैं तुझे देती हूं इससे तुझे ज्ञानकी सिद्धि होगी ॥२५॥ मार्कंडेयजी बोले ॥ २६ ॥ इस प्रकार देवी उन दोनोंको अभिलषित वर

बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता ।
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥२८॥
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॥२९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे देवीमहात्म्ये त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥
उवाच॥६॥अर्ध॥११॥श्लोकाः॥१२॥एवं२९ आदितः७००॥

देकर॥२७॥भक्तिपूर्वक उन दोनोंसे स्तुति कीगई देवी शीघ्रही अंतर्धान हो गई और इस प्रकार सुरथनाम राजा देवीसे वर पाकर ॥२८॥ और सूर्यसे जन्म प्राप्त करके सावर्णि नाम मनु होगा २८॥

यह दुर्गापाठके तेरहवें अध्यायका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ

त्रिबाणनवभूवर्षे शुक्रे मासि तिथौ रवेः ।
अनुवादः सप्तशत्या मया नीतः समाप्तताम्

सप्तशतीस्थ.वाचादिमन्त्रसंख्यासूचककोष्ठकम्

अध्यायः	उवाच	अर्धानि	श्लोकाः	मन्त्रसं.
१	१४	२४	६६	१०४
२	१	०	६८	६९
३	३	०	४१	४४
४	५	२	३५	४२
५	९	६६	५४	१२९
६	४	०	२०	२४
७	२	०	२५	२७
८	१	१	६१	६३
९	२	०	३९	४१
१०	४	१	२७	३२
११	४	१	५०	५५
१२	२	२	३७	४१
१३	६	११	१२	२९
आदितः	५७	१०८	५३५	७००

अथ ऋष्यादिन्यासः

★

मेधा मार्कण्डेयऋषये नमः शिरसि। गायत्र्यादिनानाछन्दोभ्यो नमः मुखे। श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीभ्यो नमः हृदि। ऐं ह्रीं क्लीं बीजेभ्यो नमः नाभौ। क्षमलवरयूं चामुंडाशक्त्यै नमः गुह्ये। अग्निर्वायुः सूर्यस्तत्त्वेभ्यो नमः सर्वाङ्गे॥ अथ करन्यासः॥ ॐ खड्गिनी शूलनी घोरा गदनी चक्रिणी तथा। शंखनी चापिनी बाणभुशुंडी परिघायुधा इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके घंटास्वनेन नः पाहि चापज्यानिस्वनेन चेति तर्जनीभ्यां नमः। ॐप्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चंडिके रक्ष दक्षिणे। भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरीति मध्यमाभ्यां नमः। ॐसौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरंति ते। यानि चात्यर्थं घोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवमित्यनामिकाभ्यां नमः। ॐखड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्रानि तेऽम्बिके। करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते। भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ अथाङ्गन्यासः॥ ॐ खड्गिनी शूलिनीत्यादि हृदयाय नमः। ॐ शूलेन पाहीति शिरसे स्वाहा। ॐ प्राच्यां रक्षेति शिखायै वषट्। ॐ

सौम्यानि यानीति कवचाय हुं। ॐ खड्ग शूलगदादीनीति नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ सर्वस्वरूप इत्यस्त्राय फट् ॥ अथ ध्यानम् ॥ खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघान् शूलं भुशुण्डीं शिरः शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्। नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥ १ ॥ अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां दंडं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम्। शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥२॥ घंटाशूलहलानि शङ्खमुशले चक्रं धनुः सायकान् हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम्। गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्रसरस्वतीमनुभजेच्छुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥ ३ ॥ इति ध्यानम् ॥

अथ ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तम्

ॐ अहंरुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुतविश्वदेवैः ॥
अहंमित्रावरुणोभाबिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा॥१॥
अहंसोममाहनसंबिभर्म्यहंत्वष्टारमुतपूषणंभगम् ॥ अहं
दधामिद्रविणंहविष्मतेसुप्राव्ये ३ यजमानायसुन्वते॥२॥
अहंराष्ट्रीसंगमनीवसूनांचिकितुषीप्रथमायज्ञियानाम्॥तां

मांदेवाव्यंदधुःपुरुत्राभूरिस्थात्रांभूर्यावेतुशयंन्तीम्॥३॥
मायासोअन्नमत्तियोविपश्यंतियुःप्राणितियइंदंश्रृणोत्यु-
क्तम्॥ अमंतवोमांतउपक्षियंतिश्रुधिश्रुतश्रद्धिवंतेवदामि
॥४॥ अहमेवस्वयमिदंवदामिजुष्टंदेवेभिरुतमानुषेभिः॥
यंकामयेतं तंमुग्रंकृणोमितंब्रह्माणंतमृषिंतंसुमेधाम् ॥५॥
अहं रुद्रायधनुरातनेमिब्रह्मद्विषेशरवेहंतवाउं ॥ अहंज-
नायसमदं कृणोम्यहंद्यावापृथिवीआविवेश ॥ ६ ॥ अहं
सुवेपितरमस्तमूर्द्धन्ममयोनिरप्स्वांतुः समुद्रे ॥ ततोवि-
तिष्ठेभुवनानिविश्वोतामूंद्यावर्ष्मनोपस्पृशामि ॥ ७ ॥
अहमेव वातइवप्रवाम्यारभंमाणाभुवनानिविश्वा ॥ परो
दिवापर एनापृथिव्यैतावतीमहिनासंबभूव ॥ ८ ॥

इति ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम्

अथ तंत्रोक्तं देवीसूक्तम्

देवा ऊचुः॥नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥१॥
रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमोनमः॥ज्योत्स्नायै
चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥ २ ॥ कल्याण्यै
प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः नैर्ऋत्यै भूभृतां
लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥ ३ ॥ दुर्गायै दुर्ग-

पारायै सारायै सर्वकारिण्यै ॥ ख्यात्यै तथैव कृष्णायै
धूम्रायै सततं नमः ॥४॥अति सौम्यातिरौद्रायै नतास्त-
स्यै नमो नमः ॥ नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो
नमः ॥५॥ या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता॥
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ६ ॥ या
देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ॥ नमस्तस्यै नम-
स्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु
बुद्धिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमो नमः ॥ ८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण
संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः
॥ ९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता॥ नम-
स्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१०॥ या देवी
सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमो नमः ॥११॥ या देवी सर्वभूतेषु शक्ति-
रूपेण संस्थिता॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
नमः ॥१२ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ॥
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १३ ॥
या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १४॥या देवी सर्वभूतेषु
जातिरूपेण संस्थिता॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमो नमः।१५।या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता।

नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १६ ॥
या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१७॥ या देवी सर्व-
भूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्त-
स्यै नमो नमः ॥१८॥ या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण
संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः
॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २० ॥
या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२१॥ या देवी सर्व-
भूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नम-
स्तस्यै नमो नमः ॥२२॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण
संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः
॥२३॥ या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ॥ नम-
स्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २४ ॥ या
देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नम-
स्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २५ ॥ या देवी सर्व-
भूतेषु भ्रांतिरूपेण संस्थिता ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २६ ॥ इन्द्रियाणामधिष्ठात्री
भूतानां चाखिलेषु या ॥ भूतेषु सततं तस्यै व्याप्त्यै देव्यै
नमो नमः ॥ २७ ॥ चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य

स्थिता जगत् ॥ नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २८ ॥ स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेशसेविता ॥ करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥ २९ ॥ या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ॥ या च स्मृता तत्क्षणमेव हंति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥ इति तन्त्रोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम् ॥

अथ नवार्णमंत्रजपविधिः

ॐअस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः। गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि। श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवता। नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः। रक्तदंतिकाभीमाभ्रामर्यो बी.जपे विनियोगः। अथ ऋष्यादिन्यासः॥ ॐ ब्रह्मविष्णुमहेश्वरऋषिभ्यो नमः शिरसि। ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे। श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः हृदि। नन्दाशाकम्भरीभीमाशक्तिभ्यो नमः दक्षिणस्तने। रक्तदंतिकाभीमाभ्रामरीबीजेभ्यो नमः वामस्तने। अग्निर्वायुः सूर्यस्तत्त्वेभ्यो नमः हृदये। तत ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति मूलेन करौ संशोध्य। ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः। ॐ विच्चे

कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः॥ ॐ ऐं हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा ।ॐ क्लीं शिखायै वषट् । ॐ चामुण्डायै कवचाय हुँ। ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्।ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट् ॥ अथ बीजन्यासः ॥ ॐ ऐं नमः शिखायाम् । ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे । ॐ क्लीं नमः वामनेत्रे । ॐ चां नमः दक्षिणकर्णे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः दक्षिणनासारन्ध्रे ।ॐ यैं नमः वामनासारंध्रे ।ॐ विं नमः मुखे । ॐ च्चें नमः गुह्ये ॥ अथ व्यापक-न्यासः ॥ ॐ ऐं प्राच्यै नमः । ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः । ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः ।ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः । ॐ क्लीं वायव्यै नमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः।ॐ विच्चे ईशान्यै नमः ।ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः । अथ ध्यानम् ॥ ॐ शंखं चक्रं गदां बाणान् चापं परिघशूलके।भुशुंडीं च शिरः खड्गं दधतीं दशवक्त्रकाम् ॥ १ ॥ तामसीं श्यामलां नौमि महाकालीं दशांघ्रिकाम्॥मालां च परशुं बाणान् गदां कुलिशमेव च ॥२॥ पद्मं धनुः कुंडिकां च दंडं शक्तिमसिं तथा ॥ खेटकं जलजं घण्टां सुरापात्रं

च शूलकम् ॥२॥ पाशं सुदर्शनं चैव दधतीं लोहितप्रभाम्॥पद्मे स्थितां महालक्ष्मीं भजे महिषमर्दिनीम्॥३॥ घंटां शूलं हलं शंखं मुशलासिधनुःशरान्॥दधतीमुज्ज्वलांनौमि देवीं गौरीसमुद्भवाम्॥कृतेनानेन सप्तशतीपाठेन श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताः प्रीयन्ताम्। यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्। तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ॥ १ ॥ अज्ञानाद्विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम्॥विपरीतं तु तत्सर्वं क्षमस्व परमेश्वरि ॥२॥ यस्याः स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु। न्यूनं सम्पूर्णतां याति त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥३॥ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि। या स्तुतासि मयादेवी तस्मात्त्वं वरदा भव ॥ ४ ॥ कामेश्वरि जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे ॥ गृहाण त्वं स्तुतिमिमां प्रसीद परमेश्वरि ॥५॥ यन्मात्राबिंदुबिंदुद्वितयद्वयपदद्वन्द्ववर्णादिहीनं भक्त्याभक्त्यानुपूर्वं प्रकृतिगुणवशाद्व्यक्तमव्यक्तमम्ब। मोहादज्ञानतो वा पठितमपठितं साम्प्रतं ते स्तवेऽस्मिन् तत्सर्वं साङ्गमास्तां भगवति वरदे त्वत्प्रसादात्प्रसीद ॥ ६ ॥ यदत्र पाठे जगदंबिके मया विसर्गबिंद्वक्षरहीनमीरितम्। तदस्तु सम्पूर्णतमं प्रसादतः संकल्पसिद्धिस्तु सदैव जायताम् ॥ ७ ॥ ॐ शांतिः शांतिः शांतिः ॥

इति नवार्णमन्त्रजपविधिः

अथ प्राधानिकरहस्यम्

★

अस्य श्रीसप्तशतीरहस्यत्रयस्य नारायण ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः। यथोक्तफलावाप्त्यर्थं जपे विनियोगः।

राजोवाच

भगवन्नवतारा मे चंडिकायास्त्वयोदिताः।
एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन्प्रधानं वक्तुमर्हसि॥ १॥
आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन तद् द्विज।
विधिना ब्रूहि सकलं यथावत्प्रणतस्य मे॥ २॥

इस सप्तशतीके तीनों रहस्योंके नारायण ऋषि हैं इसमें अनुष्टुप् (अर्थात ३२ अक्षरका) छन्द है और इनकी महाकाली महालक्ष्मी और महासरस्वती देवता हैं और मनोवाञ्छितफल प्राप्तिके लिये इसका विनियोग है अर्थात् इसे करते हैं (इसका अर्थ तो लिख दिया है किन्तु हाथमें जल लेकर और फिर मूलको पढ़कर जल छोड़ दे) राजा पूछने लगा कि–हे भगवन् ! आपने चण्डिका देवीके अवतार तो कहे, परंतु हे भगवन् ! इनकी प्रधानप्रकृति कहिये ॥१॥ और हे द्विज ! देवीके जिस स्वरूपकी आराधना मुझे करनी चाहिये वह संपूर्ण विधिपूर्वक मुझ दीनसे कहिये॥२॥

ऋषिरुवाच

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते ।
भक्तोऽसीति न मे किंचित्तवावाच्यं नराधिप॥३॥
सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी ।
लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता॥४
मातुलिङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च बिभ्रती ।
नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रती नृप मूर्धनि ॥५॥
तप्तकाञ्चनवर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा ।
शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥ ६ ॥
शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी ।
बभार रूपमपरं तमसा केवलेन हि ॥ ७ ॥

ऋषि बोले–कि, यह रहस्य परमगुप्त है अर्थात् किसीसे कहने योग्य नहीं है, परंतु हे राजन् ! तू भक्त है इसलिये मेरे पास ऐसी कोई वस्तु नहीं है, कि जो तुझसे न कहूं ॥३॥ सबकी आदिरूपा महालक्ष्मी तीन गुणवाली परमेश्वरी है और वह लक्ष्य और अलक्ष्यस्वरूपा है तथा संपूर्णमें व्याप्त होकर स्थित है ॥४॥ और हे राजन् ! वह मातुलिंग (बिजौराफल), गदा, खेट, पानपात्र इनको हाथोंमें और नाग, लिंग और योनि इनको शिरपर धारण करती हुई ॥५॥ और तप्त सुवर्णके समान कान्तिवाली और तप्त कांचनके समान सुन्दर आभूषण धारण किये और अपने तेजसे सम्पूर्ण आकाशको पूरित करती हुई ॥ ६ ॥ उस परमेश्वरीने सम्पूर्ण संसारको शून्य देखकर केवल

सा भिन्नाञ्जनसंकाशा दंष्ट्राञ्चितवरानना ।
विशाललोचना नारी बभूव तनुमध्यमा ॥ ८ ॥
खड्गपात्रशिरः खेटैरलंकृतचतुर्भुजा ।
कबंधहारं शिरसा बिभ्राणाऽहिशिरः स्रजम्॥ ९ ॥
सा प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ।
नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ॥१०॥
तां प्रोवाच महालक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ।
ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि च॥११॥
महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा ।
निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ॥१२॥

तमोगुणसे एक दूसरा रूप धारण किया ॥७॥ और वह भिन्न अंजनके समान कान्तिवाली दंष्ट्रासे शोभायमान सुन्दर मुखवाली विशाल नेत्रोंसे शोभित तथा सूक्ष्मकटिवाली स्त्रीरूप हो गई ॥८॥ और खड्ग पानपात्र शिर तथा खेट इनसे शोभित चार भुजावाली और कबंधके हारको तथा सर्पोंके शिरकी मालाको शिरमें धारण किये हुये ॥९॥ उस तामसी उत्तम नारीने महालक्ष्मीसे कहा कि, हे माता ! तुम मेरा नाम धरो और मेरा कर्म बताओ मैं तुमको नमस्कार करती हूं ॥१०॥ फिर उस महालक्ष्मीने उस उत्तम तामसी स्त्रीरूपसे कहा कि मैं तेरे नाम और जो कुछ कर्म हैं सो कह देती हूं ॥११॥ १ महामाया, २ महाकाली, ३ महामारी, ४ क्षुधा, ५ तृषा, ६ निद्रा, ७ तृष्णा, ८ एकवीरा, ९ कालरात्रि,

इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः ।
एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् १३
तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप ।
तत्त्वाख्येनाऽतिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥ १४ ॥
अक्षमालाङ्कुशधरा वीणापुस्तकधारिणी ।
सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ १५॥
महाविद्या महावाणी भारती वाक्सरस्वती ।
आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगर्भा च धीश्वरी ॥१६॥
अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्वतीम् ।
युवां जनयतो देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥१७॥

और १० दुरत्यया ॥ १२ ॥ यह तेरे नाम कर्मके अनुसार कहे और नामोंको जो तेरे कर्मोंको जानकर पढता है सो सुख पाता है ॥ १३ ॥ हे राजन् ! महालक्ष्मीने उनसे ऐसा कहकर अतिशुद्ध सतोगुण करके चन्द्रके समान कान्तिवाला दूसरा स्वरूप धारण कर लिया ॥ १४ ॥ और अक्षमाला, अंकुश, वीणा और पुस्तक इनको धारण किये वह उत्तम नारी हो गई और इसके भी नाम कहने लगी॥१५॥ १ महाविद्या, २ महावाणी, ३ भारती, ४ वाक्, ५ सरस्वती, ६ आर्या, ७ ब्राह्मी, ८ कामधेनु, ९ वेदगर्भा और १० धीश्वरी ॥१६॥ फिर महालक्ष्मीने महाकाली और महासरस्वतीसे कहा कि तुम दोनों देवी अपने स्वरूपके अनुसार स्त्रीपुरुषका जोड़ा

इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ।
हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥ १८ ॥
ब्रह्मन्विधे विरञ्चेति धातरित्याह तं नरम् ।
श्री पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता स्त्रियं च ताम् ॥ १९ ॥
महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह ।
एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥ २० ॥
नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम् ।
जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥ २१ ॥
स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः ।
त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥ २२ ॥

उत्पन्न करो ॥ १७ ॥ महालक्ष्मीने उन दोनोंसे यह कहकर आपही हिरण्यगर्भवाले सुन्दर और कमलासनपर बैठे स्त्रीपुरुषोंका एक जोड़ा उत्पन्न किया ॥ १८ ॥ फिर उस नरके, हे ब्रह्मन् ! हे विधि ! हे विरंचि ! हे धात ! ये नाम धरे और उस स्त्रीके श्रीः, पद्मा, कमला और लक्ष्मी ये नाम कहे ॥ १९ ॥ और महाकाली और महासरस्वतीने भी अपने जोड़े रचे, उनके भी स्वरूप और नाम तुझसे कहता हूं कि ॥ २० ॥ महाकालीने नीलकण्ठवाले रक्तबाहुवाले श्वेतशरीरवाले और चन्द्रमाको ललाटपर धारण किये पुरुषको और गौरी स्त्रीको उत्पन्न किया ॥ २१ ॥ और उस पुरुष रूपके रुद्र, शंकर, स्थाणु, कपर्दी और त्रिलोचन ये नाम कहे और उस स्त्रीके त्रयी, विद्या,

सरस्वतीं स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप ।
जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥ २३ ॥
विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ।
उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शुभा ॥२४॥
एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे ।
चक्षुष्मन्तोऽनुपश्यन्ति नेतरे तद्विदो जनाः ॥२५॥
ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृप त्रयीम् ।
रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥२६॥
स्वरया सह सम्भूय विरञ्चोऽण्डमजीजनत् ।
बिभेद भगवान् रुद्रस्तद्गौर्या सह वीर्यवान् ॥२७॥

कामधेनु, भाषा, अक्षरा और स्वरा ये नाम धरे ॥२२॥ और हे राजन् ! सरस्वतीने गौरी स्त्रीको और कृष्ण पुरुषको उत्पन्न किया उन दोनोंके नाम मैं तुझसे कहता हूं ॥ २३ ॥ पुरुषके तो विष्णु, कृष्ण, हृषीकेश, वासुदेव तथा जनार्दन और स्त्रीके उमा, गौरी, सती, चण्डी, सुन्दरी, सुभगा और शुभा ॥२४॥ फिर ये स्त्रियां सबही पुरुषत्वको प्राप्त हो गईं सो ऐसा दिव्य दृष्टिवाले पुरुष तो देखते हैं और जन नहीं जानते हैं २५॥ और हे नृप ! महालक्ष्मीने वेदत्रयी पत्नीको ब्रह्माको दिया और वर देनेवाली गौरी शिवको और विष्णुको लक्ष्मी दी ॥२६॥ फिर ब्रह्माने उस स्वराके साथ मिलकर इस ब्रह्मांडको रचा और वीर्यवान् रुद्र भगवान्ने गौरीके साथ मिलकर

अण्डमध्ये प्रधानादि कार्यजातमभून्नृप ।
महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥ २८ ॥
पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः ।
सञ्जहार जगत्सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ॥ २९ ॥
महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीश्वरी ।
निराकारा च साकारा सैव नानाभिधानभृत्॥३०॥
नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् ॥३१॥

इति प्राधानिकं रहस्यं समाप्तम् ॥ १ ॥

उसको फोड़ा ॥ २७ ॥ और हे राजन् ! ब्रह्मांडमें प्रधानादि जो कुछ कार्य हुआ सम्पूर्ण जगत् स्थावर और जंगम महाभूत जो पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश हैं इनसे उत्पन्न हुआ है ॥२८॥ फिर विष्णु भगवान्‌ने लक्ष्मीकेसाथ उसका पालन-पोषण किया और महेश्वरने गौरीके साथ उस संपूर्ण जगत्‌का संहार किया ॥ २९ ॥ और हे महाराज ! महालक्ष्मी सर्व सत्त्वमयी ईश्वरी है, वही निराकार और साकार नामोंको धारण करती है ॥ ३० ॥ और यही महालक्ष्मी और नामोंसे भी निरूपण की जाती है परन्तु जो नाम कहे हैं उनसे भिन्न नाम द्वारा नहीं ॥ ३१ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ प्राधानिकरहस्यका
हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ

अथ वैकृतिकरहस्यम्

★

ऋषिरुवाच

त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्वयोदिता ।
सा शर्वा चंडिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥
योगनिद्राहरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा ।
मधुकैटभनाशार्थं यां तुष्टावाम्बुजासनः ॥ २ ॥
दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जनप्रभा ।
विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥
स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपापि भूमिप ।
रूपसौभाग्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियाम् ॥४॥
खड्गबाणगदाशूलशंखचक्रभुशुंडिभृत् ।
परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्रुधिरं दधौ ॥ ५ ॥

ऋषि बोले–कि, तुमने जो त्रिगुणा तामसी और सात्त्विकी देवी कही वही शर्वा, चंडिका, दुर्गा, भद्रा, और भगवती कहलाती है ॥ १ ॥ और तमोगुणवाली महाकाली विष्णुभगवान्‌की योगनिद्रा कहलाती है, जिसकी स्तुति मधुकैटभके नाशके लिये ब्रह्माने की थी ॥२॥ दश मुख, दश भुजा और दश चरणवाली तथा काजलके समान श्याम प्रभावाली और तीस नेत्रोंकी विशाल मालासे शोभायमान ॥३॥ और हे राजन् ! देदीप्यमान दांत और दंष्ट्रावाली वह भयंकर स्वरूपिणी भी महालक्ष्मीमें रूप सौभाग्य और कान्ति इनकी प्रतिष्ठारूप होकर स्थित है ॥ ४ ॥ और खड्ग, बाण, गदा, शूल, शंख,

एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया ।
आराधिता वशीकुर्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥ ६ ॥
सर्वदेवशरीरेभ्यो याऽऽविर्भूताऽमितप्रभा ।
त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥७॥
श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला ।
रक्तमध्या रक्तपादा नीलजङ्घोरुरुन्मदा ॥ ८ ॥
सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा ।
चित्रानुलेपना कान्तिरूपसौभाग्यशालिनी ॥ ९ ॥
अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ।
आयुधान्यत्र वक्ष्यामि दक्षिणाधःकरक्रमात्॥१०॥

चक्र, भुशुंडी, परिघ, धनुष और रुधिर टपकते हुए शिरको धारण करती है ॥ ५ ॥ यह महाकाली दुरत्या विष्णुकी माया है जिसकी आराधना करनेसे चराचर पूजा करने-वालोंके वशमें हो जाता है ॥ ६ ॥ जो सम्पूर्ण देवताओंके शरीरसे उत्पन्न होनेवाली वह अतुल कांतिवाली त्रिगुण महालक्ष्मी साक्षात् महिषमर्दिनी है॥७॥ श्वेत मुख, नील भुजा और श्वेत स्तनमंडलवाली और रक्त कटि तथा चरणवाली और नीली पिंडली और जंघावाली तथा उत्कट मदवाली ॥८॥चित्र-विचित्र जघनोंवाली और चित्र-विचित्र ही माला, वस्त्र, और आभूषण धारण करनेवाली और विचित्र लेपन किये कांतिरूप सौभाग्यसे शोभायमान ॥ ९ ॥ ऐसी वह पूज्य अठारह भुजावाली सहस्र भुजावाली है ।

अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ।
चक्रं त्रिशूलं परशुः शंखो घण्टा च पाशकः ॥११॥
शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः ।
अलंकृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥ १२ ॥
सर्वदेवमयीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप ।
पूजयेत्सर्वलोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥ १३ ॥
गौरीदेहात्समुद्भूता या सत्त्वैकगुणाश्रया ।
साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥१४॥
दधौ चाष्टभुजा बाणान्मुसलंशूलचक्रभृत् ।
शङ्खं घण्टां लाङ्गुलं च कार्मुकं वसुधाधिप १५॥

अब यहां क्रमसे दक्षिण और वाम हाथोंके आयुध कहेंगे ॥१०॥ १ अक्षमाला, २ कमल, ३ बाण, ४ तरवार, ५वज्र, ६ गदा, ७ चक्र, ८ त्रिशूल, ९ फरसा, १० शंख, ११ घंटा, १२ फांसी ॥ ११ ॥ १३ शक्ति, १४ दंड, १५ ढाल, १६ धनुष, १७ पानपात्र, १८ कमंडलु इन आयुधोंसे अलंकृत भुजावाली और कमलपर आरूढ़ ॥१२॥ सर्वमयी ईश्वरी इस महालक्ष्मीकी जो पूजा करे वह पुरुष सब मनुष्यों और देवताओंका स्वामी होजाये ॥ १३ ॥ केवल सत्त्वगुणप्रधानवाली जो गौरीके देहसे उत्पन्न हुई है वह शुम्भासुरको मारनेवाली साक्षात् सरस्वती कहलाती है ॥ १४ ॥ और हे राजन् ! वह आठ भुजावाली है और एक बाण,

एषा संपूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति ।
निशुम्भमथिनी देवी शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ १६ ॥
इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव ।
उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥ १७ ॥
महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सरस्वती ।
दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥ १८ ॥
विरञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे ।
वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥१९॥
अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या दशानना ।
दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीमर्हतीति समर्चयेत् ॥२०॥

---

२ मूसल, ३ शूल, ४ चक्र, ५ शंख, ६ घंटा, ७ हल और ८ धनुषको धारण करती है॥१५॥ भक्तिपूर्वक पूजन करनेसे वह शुंभनिशुंभ नाशिनी देवी सर्वज्ञत्वको देती है॥१६॥ और हे राजन् ! ये तो मूर्तियोंके स्वरूप तुझसे कहे और अब इन जगन्माताओंकी अलग-अलग उपासना सुनो ॥१७॥ जब महालक्ष्मीका पूजन करे तब दक्षिण और उत्तरकी ओर क्रमसे महाकाली और महासरस्वतीका पूजन करना चाहिये और पीछेकी ओर तीनों मिथुनोंका पूजन करे ॥१८॥ सरस्वतीके साथ ब्रह्माका मध्यमें, गौरीके साथ रुद्रका दक्षिणमें और लक्ष्मीके साथ हृषीकेशका उत्तरमें पूजन करे और आगे इन तीन देवताओंका पूजन करे ॥ १९ ॥ मध्यमें अर्थात् महा-

अष्टादशभुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप ।
दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥ २१ ॥
कालमृत्यू च संपूज्यौ सर्वारिष्टप्रशान्तये ।
यदा चाष्टभुजा पूज्या शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥२२॥
नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्रविनायकौ ।
नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥२३॥
अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः ।
अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥ २४ ॥

लक्ष्मीके सामने अष्टादशभुजा लक्ष्मीका और इसके वामभागमें अर्थात् महाकालीके सम्मुख दशमुखी महाकालीका और दक्षिणभागमें महासरस्वतीका इस प्रकार महालक्ष्मीका पूजन करना चाहिये ॥२०॥ और हे राजन् ! जो केवल अष्टादशभुजाका अथवा दशाननाका अथवा अष्टभुजाका पूजन करना हो तो दक्षिण और उत्तरकी ओर ॥२१॥ क्रमसे सम्पूर्ण अरिष्टशांति करनेके लिये काल और मृत्युका पूजन करे और अब (अष्टभुजाका दूसरा प्रकार विशेषरूपसे कहते हैं कि) जब आठ भुजावाली शुम्भासुरमर्दिनीका पूजन करना हो तो ॥ २२॥ इसकी नवशक्तिका पूजन (और दक्षिण उत्तरकी ओर क्रमसे)रुद्र और गणेशका पूजन करे और 'नमो देव्यै' इस स्तोत्रसे महालक्ष्मीका पूजन करे॥२३॥ जगदम्बाके तीनों अवतारोंके पूजनमें स्तोत्र मन्त्रादिक उन्हींके आश्रित हैं और यह

महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती ।
ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥ २५ ॥
महिषान्तकरी येन पूजिता स जगत्प्रभुः ।
पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ॥२६॥
अर्घादिभिरलङ्कारैर्गन्धपुष्पैस्तथोत्तमैः ।
धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्यसमन्वितैः ॥ २७ ॥
रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप ।
बलिमांसादिपूजेयं विप्रवर्ज्या मयेरिता ॥ २८ ॥
तेषां किल सुरामांसैर्नोक्ता पूजा नृप क्वचित् ।
प्रणामाचमनीयैश्च चन्दनेन सुगंधिना ॥ ॥२९॥

अष्टादशभुजावाली पूज्या महिषमर्दिनी ॥ २४॥ महालक्ष्मी और वही महाकाली है और वही महासरस्वती है और पुण्य पापोंकी ईश्वरी और सम्पूर्ण लोकोंकी महेश्वरी है ॥२५॥ जिसने महिषासुरमर्दिनीका पूजन किया वह जगत्का स्वामी है और जगतोंको धारण करनेवाली तथा भक्तोंसे प्रीति करनेवाली चंडिकाका ॥२६॥ अर्घादिक आभूषण तथा उत्तम-उत्तम गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य और अनेक प्रकारके भक्ष्य पदार्थ से पूजन करना चाहिये ॥२७॥ और रुधिर मिले हुए मांसकी बलिसे तथा मद्यसे पूजा करे:किन्तु बलिमांसादिका पूजन ब्राह्मणोंके लिये मने किया है ॥२८॥ और हे राजन्! ब्राह्म-णोंको मद्यमांससे पूजा करना कहीं नहीं कहा है, उनको

सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः ।
वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥३०॥
पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया ।
दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥ ३१ ॥
वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् ।
ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ॥ ३२ ॥
एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ।
चरितार्धं तु न जपेज्जपंश्छिद्रमवाप्नुयात् ॥३३॥

तो प्रणाम और आचमन चन्दन और सुगन्ध आदिसे॥२९॥ और भक्तिपूर्वक कर्पूर और ताम्बूलों से पूजन करना चाहिये और देवीके आगे वामभागमें महासुर के कटे हुए शिरका पूजन करना॥३०॥ और जो ईश्वरीसे मोक्ष चाहता हो वह महिषका और दक्षिणकी ओर अग्रभागमें समग्र धर्मरूप ईश्वर सिंहका पूजन करे ॥३१॥ जिसने चराचरको धारणकर रखा है और जो देवीका वाहन है उसका पूजन करना और फिर अंजली बांधकर इन चरित्रोंसे स्तुति करे ॥ ३२ ॥ जो समय न मिले तो मध्यम चरित्रसे ही स्तुति करे (क्योंकि लक्ष्मी मूलप्रकृति है) किन्तु दूसरे जो प्रथम और उत्तम चरित्र हैं इन दोनोंमें से एक चरित्रका पाठ न करे और आधे चरित्र का भी पाठ न करे ऐसा करनेसे जपमें छिद्र हो जाता है॥३३॥

स्तोत्रमन्त्रैः स्तुवीतेमां यदि वा जगदम्बिकाम् ।
प्रदक्षिणानमस्कारान्कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥३४॥
क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः ।
प्रतिश्लोकं च जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा ॥३५॥
जुहुयात्स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः ।
भूयो नामपदैर्देवीं पूजयेत्सुसमाहितः ॥ ३६ ॥
प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्राणानारोप्य चात्मनि ।
सुचिरं भावयेद्देवीं चण्डिकां तन्मयो भवेत् ॥३७॥
एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ।
भुक्त्वा भोगान्यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात् ३८

और स्तोत्र तथा मंत्रोंद्वारा जगदम्बिकाकी स्तुति करे और प्रदक्षिणा और नमस्कार करके अंजली बांधकर शिरसे दण्डवत करे ॥३४॥ और सावधान होकर जगद्धात्रीसे बारंबार क्षमा मांगे और तिल, घी और क्षीरसे प्रत्येक श्लोक करके हवन करे ॥३५॥ अथवा स्तोत्रके मंत्रोंसे चण्डिकाके प्रीत्यर्थ शुभ हवन करे, फिर सावधान होकर नाम और पदोंसे देवीका पूजन करे ३६ फिर निश्चल हो अंजली बांधकर और आत्मामें प्राणोंको रोककर बहुत कालतक चण्डिका देवीकी भावना करे और तन्मय हो जाय॥३७॥इस प्रकार जो मनुष्य भक्तिपूर्वक परमेश्वरीका नित्य पूजन करता है वह अभीष्ट भोगोंको भोग देवीके

योो न पूजयते नित्यं चंडिकां भक्तवत्सलाम् ।
भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत्परमेश्वरी ॥३९॥
तस्मात्पूजय भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् ।
यथोक्तेन विधानेन चंडिकां सुखमाप्स्यसि ॥४०॥

इति वैकृतिकरहस्यं समाप्तम् ॥ २ ॥

अथ मूर्तिरहस्यम्

★

ऋषिरुवाच

नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा ।
स्तुता संपूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥१॥

मोक्षपदको प्राप्त होता है ॥३८॥ और जो पुरुष भक्तोंसे प्रीति करनेवाली चण्डिकाको नित्य नहीं पूजता है परमेश्वरी उसके पुण्योंको भस्म करके उसको दग्ध कर देती है ॥३९॥ इसलिये हे राजन् ! तू सम्पूर्ण लोकोंकी महेश्वरी चण्डिकाका कथित विधानसे पूजन कर, इसके करनेसे तू सुख पायेगा ॥४०॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके वैकृतिक-रहस्यका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ॥ २ ॥

ऋषि बोले—कि नन्दा भगवती नामवाली जो नन्दसे उत्पन्न होगी उसकी भक्तिपूर्वक स्तुति और पूजा करनेसे मनुष्य तीनों

कनकोत्तमकान्तिः सा सुकान्तिकनकाम्बरा ।
देवी कनकवर्णाभा कनकोत्तमभूषणा ॥ २ ॥
कमलाङ्कुशपाशाब्जैरलंकृतचतुर्भुजा ।
इंदिरा कमला लक्ष्मीः सा श्री रुक्मांबुजासना॥३॥
या रक्तदंतिका नाम देवी प्रोक्ता मयाऽनघ ।
तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम् ॥४॥
यच्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ।
रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा ॥ ५ ॥
रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा ।
रक्ततीक्ष्णनखा रक्तरसना रक्तदंतिका ॥ ६ ॥

लोकोंको वशमें कर लेता है ॥१॥ उसकी कांति सुवर्णके समान उत्तम और उसके वस्त्र सुवर्णसदृश सुन्दर हैं और वह देवी सुवर्णके समान दीप्तिमान् है ॥२॥ और कमल, अंकुश, पाश और अब्ज (शंख) इनसे चारों भुजा शोभित हैं और उसके इन्दिरा, कमला, लक्ष्मी, श्री, रुक्मा, और कमलासना ये नाम हैं ॥ ३ ॥ और हे धर्मिष्ठ ! मैंने जो रक्तदन्तिका नाम देवी कही थी उसका सम्पूर्ण भयनाशक स्वरूप कहता हूं सो सुनो ॥ ४ ॥ जिसके सुननेसे मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे छूट जाता है इसमें कुछ संशय नहीं है, रक्त वस्त्र, रक्त वर्ण और रक्त ही सम्पूर्ण अंगोंके आभूषणोंसे शोभित ॥५॥ और रक्त आयुध, रक्त नेत्र और रक्त केशवाली, अतिभयंकर तथा रक्त तीक्ष्ण नखवाली, रक्त आसनपर स्थित, रक्त दांतवाली

पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम् ।
वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी ॥ ७ ॥
दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ।
कर्कशावतिकान्तौ तौ सर्वानन्दपयोनिधी ॥ ८ ॥
भक्तान्संपाययेद्देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ ।
खड्गपात्रशिरः खेटैरलंकृतचतुर्भुजा ॥ ९ ॥
आख्याता रक्तचामुण्डा देवी योगेश्वरीति च ।
अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्थावरजंगमम् ॥ १० ॥
इमां यः पूजयेद्भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ।
भुक्त्वा भोगान्यथाकामं देवीसायुज्यमाप्नुयात् ॥ ११ ॥

देवी ॥६॥ जैसे स्त्री पतिके अनुकूल रहती है वैसे ही देवी भक्त जनके वशमें रहती है और वह पृथ्वीके समान विशाल है और उसके दोनों स्तन सुमेरुपर्वतके समान हैं ॥ ७ ॥ और वे दोनों स्तन बड़े लम्बे, अतिस्थूल और अत्यन्त मनोहर कड़े और कांतिमान् और सर्व आनन्दके समुद्र रूप हैं ॥८॥ ऐसे उन संपूर्ण कामनाओंको देनेवाले दोनों स्तनोंको देवी अपने भक्त-जनोंको पिलाती है और खड्ग, पात्र, शिर और खेट इनसे चारों भुजा शोभित हैं ॥९॥ वह रक्तचंडिका और योगेश्वरी देवी इस नामसे विख्यात है और संपूर्ण जगत स्थावर और जंगम में व्याप्त है ॥१०॥ जो पुरुष उसे भक्तिपूर्वक पूजता है वह चराचरमें व्याप्त होता है और यथेष्ट भोगोंको भोगकर देवीके

अधीते य इमं नित्यं रक्तदंत्या वपुः स्तवम् ।
तं सा परिचरेद्देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥ १२ ॥
शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना ।
गम्भीरनाभिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी ॥ १३ ॥
सुकर्कशसमोत्तुंगवृत्तपीनघनस्तनी ।
मुष्टौ शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥ १४ ॥
पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं शाकसंचयम् ।
काम्यानन्तरसैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युजरापहम् ॥ १५ ॥
कार्मुकं च स्फुरत्कांति बिभर्ति परमेश्वरी ।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥१६॥

पदको प्राप्त होता है ॥११॥ और जो पुरुष रक्तदन्तिकाके इस स्तवको पढ़ता है, देवी उसकी ऐसी परिचर्या करती है, जैसे स्त्री अपने प्रिय पतिकी ॥१२॥ शाकंभरी जो देवी है उसका नीलवर्ण है, नीलकमलके समान नेत्र हैं, गंभीर नाभि है त्रिवलीसे भूषित सूक्ष्म उदर है ॥ १३ ॥ कड़े, समान, ऊंचे, गोल और चिकने स्तन हैं और मुष्टिमें कमल है जिस पर भौंरे गुंजार रहे हैं और कमलपर विराजमान है॥१४॥ पुष्प, पल्लव, मूल और फल इनसे युक्त और अनेक सुन्दर रसोंवाले तथा क्षुधा तृष्णा मृत्यु और वृद्धावस्थाको दूर करनेवाले शाक-समूहको॥१५॥ और चमकती हुई कांतिवाले धनुषको धारण करती है, वह परमेश्वरी शाकंभरो शताक्षी है और वही दुर्गा

उमा गौरी सती चण्डी कालिका सा च पार्वती ।
शाकम्भरी स्तुवन्ध्यायञ्जपन्संपूजयन्नमन् ॥१७॥
अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्नपानामृतं जलम् ।
भीमाऽपि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशनभासुरा ॥१८॥
विशाललोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा ।
चन्द्रहासं च डमरुं शिरः पात्रं च बिभ्रती ॥१९॥
एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ।
तेजोमंडलदुर्धर्षा भ्रामरी चित्रकांतिभृत् ॥२०॥
चित्रभ्रमरसंकाशा महामारीति गीयते ।
इत्येता मूर्तयो देव्या व्याख्याता वसुधाधिप॥२१॥

कही गई है ॥ १६ ॥ और वही उमा, गौरी, सती चण्डी कालिका और पार्वती है और जो मनुष्य शाकंभरीका ध्यान करता है और जप-पूजन और नमस्कार करता है ॥१७॥ वह शीघ्र ही अन्न, पान, अमृत और जलको निरन्तर पाता है और भीमादेवी भी नील वर्ण है और उसके दंष्ट्रा और दांत बड़े कांतिमान् हैं॥१८॥ नेत्र विशाल हैं,गोल और स्थूल कुच हैं और खड्ग, डमरू, शिर और पात्र इनको धारण किये हैं ॥१९॥ और वही एकवीरा, कालरात्रि, कामदा; तेजोमण्डलदुर्धर्षा, भ्रामगी और चित्रकांतिभृत् ॥ २० ॥ और चित्रभ्रमरसंकाशा और महामारी इन नामोंसे कही गई और गाई जाती है सो हे राजन्! ये देवोको मूर्तियां विख्यात हैं २१॥

जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः ।
इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया ॥ २२ ॥
व्याख्यानं दिव्यमूर्तीनामधीष्वावहितं स्वयम् ।
एकस्यास्त्वं प्रसादेन सर्वमान्यो भविष्यसि ॥२३॥
सर्वरूपमयी देवी सर्वं देवीमयं जगत् ।
अतोऽहं विश्वरूपां त्वां नमामि परमेश्वरीम् ॥२४॥

इति मूर्तिरहस्यं समाप्तम् ॥ ३ ॥

और ये मूर्तियां जगन्माता चण्डिकाकी कामधेनु कहलाती हैं यह चरित्र परम गुप्त है इसको किसीसे कहना नहीं चाहिये ॥ २२ ॥ तू आप ही इन मूर्तियोंके व्याख्यानको सावधान होकर पढ़ उसके प्रसादसे तू सबका मान्य होजायगा ॥ २३ ॥ देवी सर्वरूपमयी है और यह संपूर्ण जगत् देवीमय है इसलिये मैं तुझ विश्वरूपा परमेश्वरीको नमस्कार करता हूं ॥ २४ ॥

पं० रामेश्वरभट्टका बनाया हुआ दुर्गापाठके मूर्ति-रहस्यका हिन्दी-अनुवाद समाप्त हुआ ॥ ३ ॥

देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम्

★

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथाः। न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥१॥ न जाने साहित्यं न परममारञ्जनविधिं न जाने षट्शास्त्रं न च गणितमार्गादिचरितम्॥कवित्वं नो जाने विमलपदपद्योक्तिविलसत्परं जाने मातस्त्वदनुसरणं कष्टहरणम् ॥२॥ विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ॥ तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥ जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ॥ तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥ पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः॥मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥५॥ परित्यक्ता देवान्विविधविधिसेवाकुलतया मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि॥ इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता निरालंबो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम् ॥ ६ ॥ श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा निरातंको रंको विह-

रति चिरं कोटिकनकैः ॥ तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥ ७ ॥ चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो जटाधारी कंठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ॥ कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥ ८ ॥ नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः किं लक्ष्यसे तव कृतं न मया वचोभिः ॥ श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे धत्से कृपामुचितमम्ब परं तथैव ॥ ९ ॥ आपत्सु मग्नः स्मरणं तवैवं करोमि दुर्गे करुणार्णवे शिवे ॥ न त्वं शठत्वं मम भावयेथाःक्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥ १० ॥ जगदम्ब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि ॥ अपराधपरम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥ ११ ॥ जनविदितकदम्बे स्वर्गलोकावलम्बे ललितपृथुनितम्बे मुक्तिदानावलम्बे ॥ अधरविजितबिम्बे मूर्ध्नि छिन्नेन्दुबिंबे हतदनुजकदम्बे रक्ष मां स्वे कुटुंबे ॥ १२ ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं दुर्गापराधक्षमापनस्तोत्रं संपूर्णम्

अथ दुर्गारातिकम्

★

नूपुररवमुखरीकृतगर्वितसंहरणे। अच्युतविरञ्चिचूडामणिचर्चितचरणे ॥ जय देवि जगदंब ॥ १ ॥ शवकर-

कृतमेखलया शोभितकटितटके । त्रिभुवनचित्रचरित्रे विरचितदिक्पटके ॥ जय देवि जगदंब ॥ २ ॥ वामे धृतोर्ध्वखड्गे ह्यधतो धृतमुण्डे। इतरे दधत्यभीतिं वरमथ चामुण्डे । जय देवि जगदंब ॥ ३ ॥ स्रग्योगासृग्धारा-पूरितवरतुण्डे । त्रिशूलदंडितच्छेदितमहिषासुरमुण्डे ॥ जय देवि जगदंब ॥ ४ ॥ तुषारगिरिजे विरजं कृतरति विपरीते । मदिरामोदितनयने गायनबहुगीते ॥ जय देवि जगदंब ॥५॥ अधरीकृतबिंबाधरजितविद्रुमदंभे । पीनघनस्तनतर्जितगर्जितगजकुम्भे ॥ जय देवि जगदंब ॥ ६ ॥ काश्मीरागरुचन्दनचर्चितशुभभाले। कल्पित-कपालमालाऽलंकृतगलनाले ॥ जय देवि जगदंब॥७॥ शङ्करसहिते मातश्चरणस्मरणात्ते । भवन्ति जीवन्मुक्ता निर्जितभवभीते ॥ जय देवि जगदंब ॥८॥ अयि दीने मयि मातर्निजशंकरदासे। कुरु करुणामयलोचनभक्ति-जनोल्लासे ॥ जय देवि जगदब ॥ ९ ॥

इति दुर्गारार्तिकम्

अथ काम्यप्रयोगविधिः

★

प्रतिश्लोकमाद्यन्तयोर्मन्त्रं जपेन्मन्त्रसिद्धिः॥ १॥सप्र-णवमनुलोमव्याहृतित्रयमादौ अन्ते तु विलोमं तदित्येवं प्रतिश्लोकं कृत्वा शतावृत्तिपाठेऽतिशीघ्रं सिद्धिः ॥२॥ प्रतिश्लोकमादौ जातवेदसे सुनवाम सोमम् इत्यृचं पठेत्सर्व-

कामसिद्धिः ॥ ३ ॥ अपमृत्युवारणायादावन्ते त्र्यंबकमन्त्रं पठेत्। प्रतिश्लोकमादावन्ते तन्मन्त्रजप इत्यन्यत्र ॥ ४ ॥ प्रतिश्लोकमादावन्ते शूलेन पाहि नो देवीति पाठादपमृत्यु-नाशः। अस्य केवलस्यापि श्लोकस्य लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपेऽपमृत्युवारणम् ॥ ५ ॥ प्रतिश्लोकमादावन्ते शरणागतदीनार्तेति श्लोकं पठेत्सर्वकार्यसिद्धिः ॥ ६ ॥ प्रतिश्लोकमादावन्ते करोतु सा नः शुभेत्यर्धं पठेत्सर्व-कार्यसिद्धिः ॥ ७ ॥ स्वाभीष्टवरप्राप्तये एवं देव्या वरं लब्ध्वेति श्लोकं प्रतिमन्त्रमादावन्ते पठेत् ॥ ८ ॥ सर्वापत्ति-वारणाय प्रतिश्लोकमादावन्ते दुर्गेस्मृतेति पठेत्। अस्य केवलस्यापि श्लोकस्य कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः ॥ ९ ॥ सर्वबाधेत्यस्य लक्षजपे प्रतिश्लोक-पाठे वा श्लोकोक्तं फलम् ॥ १० ॥ इत्थं यदा यदा बाधेति श्लोकजपे महामारीशांतिः ॥ ११ ॥ ततो वव्रे नृपो राज्य-मिति मन्त्रस्य जपे प्रतिश्लोकमादावन्ते च पाठे वा पुनः स्वराज्यलाभः ॥ १२ ॥ हिनस्ति दैत्यतेजांसि इत्य-नेन सदीपबलिदाने घंटाबंधने च बालग्रहशांतिः ॥ १३ ॥ आद्यावृतिमनुलोमेन पठित्वा ततो विपरीतक्रमेण द्वितीयामनुलोमे तृतीयामित्येवमावृत्तित्रयेण शीघ्रं कार्य-सिद्धिः ॥ १४ ॥ सर्वापत्तिवारणाय दुर्गे स्मृतेत्यर्धं ततो यदंति यच्च दूरके इत्यृचं तदन्ते दारिद्र्यदुःखेत्यर्धमेव कार्यानुसारेण लक्षमयुतं सहस्रं शतं वा जपः ॥ आदा-

वंते प्रतिश्लोकपाठे त्ववश्यं कार्यसिद्धिः ॥१५॥ कांसो स्मीत्यृचं आदावंते प्रतिश्लोकं पठेल्लक्ष्मीप्राप्तिः॥१६॥ प्रतिश्लोकमनृणा अस्मिन्नित्यृचं आदावंते पठेदृणपरिहारः ॥१७॥ मारणार्थमेवमुक्त्वा समुत्पत्त्येति श्लोकं प्रतिश्लोकमादावन्ते पठेन्मारणोक्तावृत्तिभिः फलसिद्धिः ॥१८॥ ज्ञानिनामपि चेतांसि इति श्लोकजपमात्रेण सद्यो मोहनमित्यनुभवसिद्धम् ॥ प्रतिश्लोकमादावन्ते तच्छ्लोकपाठे त्ववश्यम् ॥१९॥ रोगानशेषानिति श्लोकस्यादावन्ते प्रतिश्लोकपाठे सकलरोगनाशः तन्मन्त्रजपेऽपि ॥२०॥ इत्युक्ता सा तदा देवी गंभीरेति श्लोकपाठे पृथग्जपे वा विद्याप्राप्तिर्वाग्विकारनाशश्च ॥२१॥ भगवत्या कृतं सर्वमित्यादिद्वादशोत्तरशताक्षरो मन्त्रः सर्वकामदः सर्वापत्तिवारणश्च ॥ २२ ॥ देवी प्रपन्नार्तिहरे इति श्लोकस्य यथाकार्यं लक्षायुतसहस्रशतान्यतमसंख्याजप आदावन्ते प्रतिश्लोकपाठे वा सर्वापन्निवृत्तिः सर्वकामप्राप्तिश्च। एषु प्रयोगेषु प्रतिश्लोकं दीपाग्रे केवलमेव नमस्कारकरणेऽतिशीघ्रं सिद्धिः । प्रतिश्लोकं कामबीजसम्पुटितस्यैकचत्वारिंशद्दिनम् । त्रिरावृत्तौ सर्वकामसिद्धिः ॥२३॥ एकविंशतिदिनपर्यंतमुक्तरीत्या प्रत्यहं त्रयोदशावृत्तौ वशीकरणम् ॥२४॥ मायाबीजं सम्पुटितस्य षट्पल्लवसहितस्य सप्तदिनपर्यन्तं त्रयोदशावृत्तावुच्चाटनसिद्धिः ॥ २५ ॥ तादृशमेव दिनचतुष्टय-

मेकादशावृत्तौ सर्वोपद्रवनाशः ॥२६॥ एकोनपञ्चाशद्दिनपर्यन्तं प्रतिश्लोकं श्रीबीजसम्पुटितस्य पञ्चदशावृत्तौ लक्ष्मीप्राप्तिः ॥२७॥ प्रतिश्लोकं वाग्बीजसंपुटितस्य शतावृत्त्या विद्याप्राप्तिः ॥ २८ ॥

इति काम्यप्रयोगविधिः

अथ संपुटव्यवस्था

★

तत्र पार्वतीप्रश्नः॥देव्युवाच॥संपुटं कतिधा स्वामिन्वेत्तुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ कथयस्व सुरेशान यद्यहं तव वल्लभा ॥ ईश्वर उवाच ॥ संपुटं द्विविधं ज्ञेयमुदयास्तकरं प्रिये ॥ शृणूदयत्वमत्रादौ पश्चादस्तं वदामि ते ॥ मन्त्रमादौ पुनः श्लोकमन्ते मन्त्रं पुनः पठेत्॥ पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं क्रमोऽयमुदये शुभः ॥ उदयोत्कर्षलाभाय सम्पुटोऽयमुदाहृतः॥अत्र सर्वत्र श्लोकमिति मन्त्रोपलक्षणम्॥अस्तं चिकित्साशास्त्रेषु शरावाभ्यां कृतं भवेत्। तत्तेऽहं प्रवदाम्यत्र एकाग्रकृतमानसः॥ मन्त्रमादौ पुनः लोकमन्ते मन्त्रविपर्ययम्॥पुनर्मंत्रं पुनःश्लोकं पुनर्मन्त्रं विपर्ययम्॥मारणोच्चाटने बन्धे सम्पुटोऽयमुदाहृतः ॥ प्रकारोऽयमनादृत्य कुर्वन्त्यात्मप्रकल्पितम् ॥ रौरवादिषु पच्यन्ते यावदाभूतसंप्लवम् ॥ इति ॥

अथ प्रयोगान्तराणि कात्यायनीतन्त्रोक्तानि

अस्य पुरश्चरणस्वरूपं मरीचिकल्पे । कृष्णाष्टमीं समारभ्य यावत्कृष्णचतुर्दशी ॥ वृद्धचैकोत्तरया जाप्यं पूर्वसम्पुटितं तु तत् ॥ एवं देवि मया प्रोक्तः पौरश्चरणिकःक्रमः ॥ तदन्ते हवनं कुर्यात् प्रतिश्लोकेन पायसैः ॥ रात्रिसूक्तं प्रतिऋचं तथा देव्याश्च सूक्तकम् ॥ हुत्वान्ते प्रजपेत्स्तोत्रमादौ पूजादिकं मुने ॥ इति । पूर्वाभ्यां रात्रिसूक्तदेवीसूक्ताभ्यां सम्पुटितमित्यर्थः । मन्त्रविभागश्च कात्यायनीतंत्रोक्तः ततो रात्रिसूक्तं देवीसूक्तं प्रतिऋचं हुत्वान्ते एवं पुरश्चरणान्ते यथेच्छं स्तोत्रं जपेदित्यर्थः एवं सिद्धयन्त्रस्य वक्ष्यमाणकाम्यप्रयोगान् कुर्यात् ॥ इति संपुटव्यवस्था ॥

अथ शतचण्डीविधिः

मन्त्रमहोदधौ–शतचण्डीविधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम् ॥ नृपोपद्रव आपन्ने दुर्भिक्षे भूमिकम्पने ॥ १ ॥ अतिवृष्टावनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ॥ सर्वे विघ्ना विनश्यंति शतचण्डीविधौ कृते ॥२॥ रोगाणां वैरिणां नाशो धनपुत्रसमृद्धयः ॥ शङ्करस्य भवान्या वा प्रासादनिकटे शुभम् ॥ ३ ॥ मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्यात्सध्वजतोरणम् ॥ तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ॥ ४ ॥ स्नात्वा नित्यक्रियां कृत्वा वृणुयाद्दश वाडवान् ॥ जितेन्द्रियान्सदाचारान् कुलीनान्सत्यवादिनः ॥५॥ व्युत्प-

न्नांश्चण्डिकापाठरतान् लज्जादयावतः ॥ मधुपर्कविधानेन स्वर्णवस्त्रादिदानतः ॥६॥ जपार्थमासनं मालांदद्यात्तेभ्योऽपि भोजनम् ॥ ते हविष्यान्नमश्नन्तो मंत्रार्थगतमानसाः ॥७॥ भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम् ॥ मार्कंडेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः ॥ ८ ॥ नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चायुतं पृथक् । पृथक्सम्पुटीकरणादिति शेषः ॥ प्रत्येकं ब्राह्मणैरयुतजपः कार्यः ॥ अष्टमीनवमीचतुर्दशीपौर्णमासीषु यथा शतावृत्तिसमाप्तिर्भवति तथारम्भः कर्तव्य इति साम्प्रदायिकाः ॥ यजमानः पूजयेच्च कन्यानां नवकं शुभम् ॥ ९ ॥ द्विवर्षाद्या दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् ॥ नाधिकाङ्गीं न हीनाङ्गीं कुष्ठिनीं च व्रणांकिताम् ॥१०॥ अंधां काणां केकरां च कुरूपां रोमयुक्तनुम् ॥ दासीजातां रोगयुक्तां दुष्टां कन्यां न पूजयेत् ॥ ११ ॥ विप्रां सर्वेष्टसंसिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ॥ वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥१२॥ द्विवर्षा सा कुमार्युक्ता त्रिमूर्तिर्हायनत्रिका ॥ चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ॥१३॥ षडब्दा कालिका प्रोक्ता चंडिका सप्तहायनी ॥ अष्टवर्षा शांभवी स्याद्दुर्गा तु नवहायनी ॥ १४ ॥ सुभद्रा दशवर्षोक्तास्ता मन्त्रैः परिपूजयेत् ॥ तासामावाहने मन्त्रः प्रोच्यते शंकरोदितः ॥ १५ ॥ मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातॄणां रूपधारिणीम् ॥ नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ॥ १६ ॥ कुमारि-

कादिकन्यानां पूजामंत्रान्ब्रुवेऽधुना ॥ १७ ॥ जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्तिस्वरूपिणि ॥ पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ॥१८॥ त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्गं ज्ञानरूपिणीम् ॥ त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥ १९ ॥ कालात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् ॥ कल्याणजननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥२०॥ अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम्॥ अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ॥२१॥ कामाचारां शुभां कान्तां कालचक्रस्वरूपिणीम्॥कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ॥२२॥ चण्डवीरां चण्डमायां चंडमुंडप्रभञ्जनीम् ॥ पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चंडविक्रमाम् ॥ २३ ॥ सदानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम् ॥ सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ॥ २४ ॥ दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवदुःखविनाशिनीम्॥ पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्तिनाशिनीम् ॥२५॥ सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम् ॥ सुभद्राजननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ॥२६॥ एतैर्मन्त्रैः पुराणोक्तैस्तांतां कन्यां समर्चयेत् ॥ गन्धैः पुष्पैर्भक्ष्यभोज्यैर्वस्त्रैराभरणैरपि ॥२७॥ वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले ॥ घटं संस्थाप्य विधिना तत्रावाह्यार्चयेच्छिवाम् ॥२८॥ तदग्रे कन्यकाश्चापि पूजये-

द्ब्राह्मणानपि ॥ उपचारैस्तु विविधैः पूर्वोक्तवरणादपि- ॥२९॥ एवं चतुर्दिनं कृत्वा पञ्चमे होममाचरेत् ॥पाय- सान्नैस्त्रिमध्वक्तैर्द्राक्षारम्भाफलादिभिः ॥३०॥ मातुलि- ङ्गैरिक्षुखंडैर्नारिकेरैः पुरैस्तिलैः॥जातीफलैराम्रफलैरन्यै- र्मधुरवस्तुभिः ॥३१॥ सप्तशत्या दशावृत्त्या प्रतिमंत्रं हुतं चरेत् ॥ अयुतं च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः ॥३२॥कृत्वावरणदेवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ॥ कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग्देवमग्निं विसृज्य च॥ ३३॥ अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः॥ निष्के सुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ॥ ३४ ॥ भोजयेच्च शतं विप्रान् भक्ष्य- भोज्यैः पृथग्विधैः ॥तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्त्वा गृह्णीया- दाशिषस्तथा ॥३५॥ एवं कृते जगद्वश्यं सर्वं नश्यन्त्यु- पद्रवाः॥राज्यं धनं यशः पुत्रानिष्टमन्यल्लभेत सः॥३६॥

इति मन्त्रमहोदधौ शतचण्डीविधिः समाप्तः ।

अथ वाचनक्रमः

★

यथा वारहीतन्त्रे-यावन्न पूर्यतेऽध्यायस्तावन्न विर- मेत्पठन् ॥ यदि प्रमादादध्याये विरामो भवति प्रिये॥ पुनरध्यायमारभ्य पठेत्सर्वं मुहुर्मुहुः ॥अनुक्रमात्पठेद्देवि शिरःकंपादिकं त्यजेत् ॥ न मानसं पठेत्स्तोत्रं वाचिकं तु प्रशस्यते ॥ न स्वयं लिखितं स्तोत्रं नाब्राह्मणलिपिं

पठेत् ॥ पाठाभावे कण्ठतस्तु पुस्तकोपरि वाचयेदिति ॥ यत्तु–आधारे स्थापयित्वा तु पुस्तकं वाचयेत्ततः ॥ हस्त-संस्थापनादेव भवेदर्धफलं ध्रुवमिति ॥ तस्य व्यवस्थापि तत्रैव । पुस्तके वाचनं हस्ते सहस्रादधिकं यदि ॥ ततो न्यूनस्य तु भवेद्वाचनं पुस्तकं विना ॥ सहस्रान्न्यूनमंत्रस्य पाठसत्त्वे वाऽऽधारस्थापितपुस्तकोपर्येव वाचनमिति तद्वाचनार्थः । प्रकृतस्तोत्रस्य सहस्रान्न्यूनत्वात्ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैरिति वैकृतिकरहस्ये विधानाच्च ॥ पाठाभावे पुस्तकस्याधारस्थापनेनैव वाच-नम् । कण्ठपाठीकृत्य पुस्तकं विनैव तु कृताञ्जलितया पठनमुत्तममिति द्रष्टव्यमिति स्पष्टं शक्तिसंगमतंत्रे ॥ तद्वचनं दुर्गाप्रदीपे द्रष्टव्यमिति ॥

इति वाचनक्रमः ।

अथ ब्रह्मशापविमोचनम्

ॐ अस्य श्रीचंडिकास्तोत्रस्य ब्रह्मशापविमोचन-मंत्रस्य वसिष्ठनारदसंवादाधिपत्योर्ब्रह्मा ऋषिः ॥ सर्वै-श्वर्यकारिणी श्रीदुर्गा देवता ॥ चरित्रत्रयबीजम् ॥ ह्रीं शक्तिरूपिणी कल्पितकार्यसिद्धयर्थं जपे विनियोगः ॥

ॐ रमास्वरापायै मधुकैटभमार्दिन्यै ब्रह्मशापविमुक्ता भव। ॐ श्रीं बुद्धिरूपिण्यै महिषासुरसैन्यनाशिन्यै ब्रह्मशापविमुक्ता भव। ॐ रं रक्तरूपिण्यै महिषासुर-मर्दिन्यै शुंभवधकारिण्यै ब्रह्मशापविमुक्ता भव। ॐ शां शक्तिरूपिण्यै वेदस्तुत्यै ब्रह्मशापविमुक्ता भव। ॐ श्रीं श्रद्धारूपिण्यै फलदात्र्यै ब्रह्मशापविमुक्ता भव। ॐ मां मातृरूपिण्यै अर्गलसहितायै ब्रह्मशापविमुक्ता भव। ॐ श्रींह्रीं दुर्गायै सर्वैश्वर्यकारिण्यै ब्रह्मशाप-विमुक्ता भव। ॐ क्लीं ह्रीं ॐ नमः शिवायै अभेद्यकवच-रूपिण्यै ब्रह्मशापविमुक्ता भव। ॐ कल्पकाली ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेदरूपिण्यै ब्रह्मशापविमुक्ता भव॥ ॐ॥

इति रुद्रयामले चण्डिकाशापमोचनं संपूर्णम्

हिन्दीटीकासहिता दुर्गासप्तशती समाप्ता।

विज्ञापन (क्रय्य पुस्तकें)

★

नाम.

दुर्गासप्तशती–नागोजीभट्टकृत संस्कृतटीका सहित ... ...

शिवमहापुराण–मूल बड़ा ...

शिवमहापुराण–उपरोक्त सर्वालंकारोंसे विभूषित और विद्यावारिधि पंडित ज्वालाप्रसादजी मिश्रकृत सरल भाषाटीकासहित खुला पत्रा ...

श्रीमद्भागवत माहात्म्य भा० टी० ...

श्रीमद्भागवत–चूर्णिका नामक संस्कृत-टीका व बड़े अक्षरोंसहित ...

श्रीमद्भागवत–गोलोकवासी कविवर लाला शालग्रामजीकृत भाषाटीका

शुकसागर–अर्थात् श्रीमद्भागवत भाषा-सम्पूर्ण बारहों स्कन्ध गोलोकवासी कविवर लाला शालग्रामजी कृत श्लोकांकसहित बड़ा ...

श्रीमद्भागवत–दशमस्कंधमात्र भा० टी० व दृष्टांतोंसहित ... ...

विज्ञापन

नाम.

श्रीमद्भागवत-एकादशस्कन्ध भा० टी०
ग्लेज पत्रात्मक ...

श्रीमद्भागवताद्यपद्यव्याख्याशतक-'जन्मा-
द्यस्य' श्लोकके सौ अर्थ ...

काशीखण्ड-काशीनिवासी त्रिपाठ्युप-
नामकश्रीयुत पं० नारायणशर्मकृत
भाषाटीका पत्राकार ...

केदारखण्ड-स्कन्दपुराणान्तर्गत-मूल
पत्राकार ... ...

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०-२६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०-२६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS